卐 ॐ 卐

- चतुर्थ सत्र -

मानव संस्कृति का वैचारिक स्वरूप

संस्कृति का स्थायित्व उसके श्रेष्ठ वैचारिक स्वरूप पर निर्भर करता है, इसीलिए ऋषियों ने इस क्षेत्र में ऐसे मानकों की स्थापना की, जो प्रकृति के व्यवहार पर आधारित थे। ***उन मनीषियों ने अपनी मानक खोजों द्वारा अनेक जटिल प्रश्नों को सुलझाया, उनमें ईश्वर के निराकार स्वरूप को सरल विधि से जन साधारण को समझाना भी एक था।*** इस प्रकार वैदिक धर्म मानव के विकास की श्रेष्ठतम सीमा बना। इस सत्र में प्रतीकोपासना के विकास क्रम पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

1. ब्रह्म का निराकार स्वरूप :- रामचरितमानस में भगवान शंकर पार्वती जी को निराकार परमात्मा का स्वरूप समझाते हुए कहते हैं -

चौ॰ :- *बिनु पद चलइ, सुनै बिनु काना, कर बिनु करम करइ विधि नाना।*
आनन रहित सकल रस भोगी, बिनु बानी बकता बड़ जोगी।।
तन बिनु परस नयन बिनु देखा, ग्रहइ प्रान बिनु बास असेषा।
असि सब भाँति अलौकिक करनी, महिमा जासु जाइ नहिं बरनी [a] *।।*

अर्थ :- निराकार परमात्मा बिना पैरों के चलता है, बिना कानों के सुनता है तथा बिना हाथों के अनेक प्रकार के कार्यों को करता है। वह बिना मुँह के सभी प्रकार के रसों का आनन्द लेता है तथा बिना वाणी (जीभ) के बड़ा ही योग्य वक्ता भी है। वह बिना शरीर के स्पर्श का अनुभव कर सकता है तथा बिना आँखों के देख भी सकता है। वह परमात्मा बिना नाक के गंध को ले सकता है। उस परमात्मा के कार्य बड़े ही विचित्र हैं तथा उसकी महिमा का वर्णन करना अति कठिन है।

शंकर-पार्वती सम्वाद

चित्र : 4.01

इस परिभाषा को सुनकर एक बार तो पार्वती जी भी चकरा गयीं।

यह समझ कर ही भगवान शंकर ने पार्वती जी से पहले ही कह दिया था, कि -

---

a श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड दो. 117-118 के मध्य

चौ० :- *सगुनहि अगुनहि नहि कछु भेदा,*
गावहिं मुनि पुरान बुध वेदा। [a]

अर्थ :- हे पार्वती ! सगुण उपासना करने में और निर्गुण उपासना करने में अन्तर कुछ भी नहीं है, क्योंकि दोनों विधियों से परमात्मा की प्राप्ति हो जाती है, ऐसा वेद, पुराण और विद्वानों का कहना है।

चौ० :- ***अगुन अरूप अलख अज जोई, भगत प्रेम बस सगुन सो होई*** [a] ***।***

अर्थ :- जो ब्रह्म निर्गुण, अरूप, अगोचर एवम् अजन्मा है, वह भक्त के प्रेम के कारण अर्थात् जब भक्त निरन्तर ***'भावमय'*** होकर समाधि का अभ्यास करता है, तब परमात्मा सगुण रूप धारण कर भक्त को साक्षात् दर्शन भी देते हैं।

ऐसा तब होता है जब साधक अपने मन की पूर्ण एकाग्रता प्राप्त कर लेता है।

2(i) अव्यक्त से व्यक्त बनाने की वैज्ञानिक विधि :- क्वांटम भौतिकी (Quantum Physics) के अनुसार, कोई भी ठोस पदार्थ चुम्बकीय विद्युत क्षेत्र (Field) का भौतिकीकरण मात्र है [b]। मान लीजिए, स्वर्ण के कुछ कणों का निर्माण होना है, तो पहले एक चुम्बक क्षेत्र (Electro-magnetic field) निर्मित होता है, उस चुम्बक क्षेत्र के भीतर स्वर्ण कणों के बनने की जानकारी (Information) प्रवेश करती हैं और स्वर्ण कणों का निर्माण हो जाता है। वैज्ञानिकों का कहना है, कि चुम्बक क्षेत्र सर्वत्र विद्यमान है तथा यह सृष्टि के आदि से सतत् सर्वत्र स्थित है। रही बात स्वर्ण कणों के निर्माण के लिए जानकारी (Information) की, वह कहाँ से आती है, पता नहीं, ***जबकि भारतीय मनीषियों का मानना है, कि चुम्बकीय विद्युत क्षेत्र (Field) तो प्रकृति का भाग है, जो आदि काल से है, सर्वत्र है, परन्तु नाम एवम् रूप के संकेतों का प्रवेश किसी चैतन्य सत्ता के बिना नहीं हो सकता, अतएव वह चैतन्य सत्ता ही अव्यक्त परमात्मा है, जो प्रकृति के गर्भ में सूचनाओं (Informations) का प्रवेश करा कर सम्पूर्ण जगत का निर्माण करती है*** [c] ***।***

---

a *श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड दो. 115-116 के मध्य*

b The quantum field is seen as the fundamental physical entity, a continuous medium which is present everywhere in space. Particles are merely local Condensations of the field, Concentrations of energy, which come and go, thereby losing their individual character and dissolving into the underlying field. In the words of Albert Einstein –
We may therefore regard matter as being Constituted by the regions of space in which the field is extremely intense .... There is no place in this new kind of Physics both for the field and matter, for the field is the only reality. *(Page-233 Tao of Physics, 3rd Edition, Publishers M/s. Flamingo)*

c ***मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम्। संभवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत।।*** *(गीता-14/3)*
अर्थ :- हे अर्जुन ! मेरी महत् ब्रह्म रूप मूल प्रकृति सम्पूर्ण भूतों की योनि है; अर्थात् गर्भाधान का स्थान है और मैं उस योनि में चेतन समुदाय रूप गर्भ को स्थापन करता हूँ। उस जड़ चेतन के संयोग से सब भूतों (पदार्थों) की उत्पत्ति होती है।
सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः संभवन्ति याः। तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता।। *(गीता-14/4)*
अर्थ :- हे अर्जुन ! नाना प्रकार की सब योनियों में जितनी मूर्तियाँ अर्थात् शरीरधारी प्राणी उत्पन्न होते हैं, प्रकृति उन सबकी गर्भ धारण करने वाली माता है और मैं बीज को स्थापन करने वाला पिता हूँ।

ठीक इसी प्रकार, चैतन्य आत्मा से युक्त साधक जब अपनी साधना द्वारा परमात्मा की याद में सतत् नाम, जप तथा रूप का ध्यान करता है, तब प्रकृति में कम्पन होने लगते हैं, जिससे विशेष प्रकार का चुम्बकीय विद्युतक्षेत्र (Field) उत्पन्न हो जाता है तथा परमात्मा के नाम एवम् रूप के संकेत इसमें प्रवेश कर जाते हैं, क्योंकि विचार में बहुत बड़ी शक्ति है और विचारों का उद्‌गम है मानव मन, जिसके स्थिर हो जाने पर महान से महान कार्य सम्पादित किए जा सकते हैं। ***इस प्रकार एक न एक दिन मन की पूर्ण एकाग्रता होते ही साधना सफल हो जाती है और तब जिस देवता के रूप का ध्यान तथा नाम का जप किया होता है, वही देवता उसी रूप में साक्षात् प्रकट होकर भक्त को दर्शन देता है। यह बात विचारणीय है, कि रूप की भावना के बिना मात्र नाम जप से क्या इष्टदेव का साक्षात्कार सम्भव है ? भारत के महान ऋषियों की खोज इस प्रकार आधुनिक विज्ञान की समझ से कहीं आगे है।***

2(ii) निर्गुण से सगुण का विकास :- निर्गुण ब्रह्म किस प्रकार सगुण बन जाता है, यह बात एक सुन्दर एवम् सरल उद्धरण द्वारा श्रीरामचरितमानस में भी बतलायी गयी है :-

चौ० :-*जो गुन रहित सगुन सोइ कैसे, जलु हिम उपल बिलग नहि जैसे* [a] **।**

अर्थ :- जो ब्रह्म गुण रहित है, वह सगुण इस प्रकार बन जाता है, जैसे वर्षा के समय जल, ओले (वर्षात् में गिरी बर्फ) बन जाते हैं। इस प्रकार ओले और जल में कोई अन्तर नहीं है।

इतनी साफ-साफ बात बतला कर श्रद्धा, विश्वास मार्गी साधकों के हितार्थ राम कथा, जिसे शंकर जी ने अपने मानस में पहले से ही रच रखी थी, पार्वती जी को निमित्त बना कर जगत के सभी भक्ति मार्ग के साधकों के कल्याणार्थ सुनायी है। परमात्मा है, यह बात बुद्धि द्वारा तो ठीक से समझ आती है, क्योंकि इस सृष्टि को उत्पन्न करने वाला तथा निर्बाध रूप से चलाने वाला निश्चित रूप से कोई तो है, उसी का नाम ***'परमात्मा'*** है। ***यद्यपि निर्गुण परमात्मा को समाधि अवस्था में 'चित्त पटल' पर अनुभव तो किया जा सकता है तथापि सच यह भी है, कि परमात्मा की निराकार स्वरूप वाली उपरोक्त परिभाषा बड़े से बड़े विद्वान के लिए भी समझना बड़ा कठिन है।*** इस बात को इस प्रकार समझें, कि 'एलेक्ट्रॉन' का आकार 0.1×10^{-14} मि.मी. आँका गया है, परन्तु परमात्मा तो इस आकार से भी कहीं अधिक सूक्ष्म है और वह कोई पदार्थ भी नहीं है, इसीलिए वह किसी इन्द्रिय द्वारा अथवा किसी सूक्ष्मदर्शी यन्त्र द्वारा पकड़ में आने वाला नहीं है। तो फिर उसको कैसे पहचानें और उसकी उपासना कैसे की जाये, यह एक यक्ष प्रश्न था ? ऋषि 'विश्वामित्र' ने अपने गायत्री मंत्र की खोज द्वारा इस महा प्रश्न को हल करने की विधि निकाली।

2(iii) गायत्री मंत्र :- ***''ॐ भूः भुवः स्वः, तत्सवितुर्वरेण्यम्, भर्गो देवस्य धीमहि, धियो यो नः प्रचोदयात्''।*** इस मंत्र के शोधकर्त्ता ने अनन्त आकाशगंगाओं के निरन्तर अति तीव्र गति से दौड़ने की ध्वनि ***'ॐ'*** को समाधि अवस्था में सुना और तब उस अनाम परमात्मा का सभी ऋषियों से मिलकर सर्वसम्मति से सांकेतिक चिह्न (नाम) ***'ॐ'*** घोषित करवाया (ॐ भूः भुवः स्वः)। अरबों आकाशगंगाओं में स्थित सूर्यो के अनन्त प्रकाश को निराकार परमात्मा का स्वरूप तय किया गया (तत्सवितुर्वरेण्यम्)। ***इस प्रकार अनाम का नाम 'ॐ' तथा अरूप का***

---

a श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड दो. 115-116 के मध्य

ऋषि विश्वामित्र द्वारा समाधि में ॐ का दर्शन

चित्र : 4.02

रूप 'प्रकाश' तय हो जाने पर निर्गुण से सगुण उपासना का सिद्धान्त सर्वसम्मति से तय कर दिया गया। इतना ही नहीं, बल्कि आकाशगंगा के बाह्य घेरों को अर्थात् 'ब्रह्म लोक' को अलग करके जो चित्र शेष बचा अर्थात् 'बैकुण्ठ लोक' और 'शिव लोक' के दोनों भागों से बने चित्र *'ॐ'*, जिसके चारों ओर प्रकाश की किरणें छिटक रही हैं, को सगुण रूप से ध्यान करने हेतु निश्चित भी कर दिया। इस सिद्धान्त ने वैदिक युग में एक महान क्रान्ति का सूत्रपात किया। इसीलिए 'विश्वामित्र' सारे विश्व के मित्र बन गये और राज्य के प्रधानाचार्य 'वशिष्ठ' जी ने उन्हें सार्वजनिक रूप से ब्रह्मर्षि की उपाधि से विभूषित भी कर दिया तथा गायत्री मंत्र को वेदमाता, गायत्री माता, महामंत्र आदि नामों से पहचाना जाने लगा। गायत्री में परमात्मा को प्राप्त करने की खोज भी निहित है (भर्गो देवस्य धीमहि=उस देवता के प्रकाश का ध्यान करें)। ***संसार के किसी भी गुरु द्वारा आत्मिक जगत में इतनी बड़ी खोजें आज तक नहीं की गई हैं।*** क्योंकि ***'गायत्री' में महान खोजें निहित हैं अतः गायत्री[a] मानव धर्म का आधार है।***

इस प्रकार परमात्मा इन्द्रियगोचर बना दिया गया, तो इस सिद्धान्त का आगे विकास करके परमात्मा के मानव रूप तक की कल्पना कर ली गयी। इतना ही नहीं, प्रकृति में अनेक शक्तियाँ काम कर रही हैं, उन सभी की मानव के रूपों में कल्पना की गयी और उनकी उपासना के लिए कवियों द्वारा अनेकानेक सुन्दर काव्यों एवम् पौराणिक कथाओं का सृजन किया गया। यह एक और महानतम क्रांतिकारी कदम था।

3. प्रतीकोपासना का विकास :- यह सत्य है, कि वेदों के प्रारम्भिक काल में ईश्वर उपासना निराकार स्वरूप से ही की जाती थी और वह भी अद्वैत भाव से, परन्तु वह मार्ग तो मात्र *'ज्ञान-विज्ञान'* मार्ग वाले साधकों के हितार्थ ही था, अतएव समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग ईश्वर उपासना से वञ्चित हुए जा रहा था, तब ऋषियों को पूरे समाज के हित को ध्यान में रखते हुए अन्य पाँच मार्गों की खोज भी करनी पड़ी और इस खोज में निराकार परमात्मा को सगुण- साकार स्वरूप प्रदान करना परमावश्यक माना गया, जिससे सामान्य जन को उपासना की विधि समझ आ सके और हर वर्ग के लोग उसे प्रयोग कर सकें। यद्यपि उपनिषदों में सगुण-साकार का विचार 'बीज' रूप में पहले से ही मौजूद था और तब गायत्री मंत्र के लेखन से होते हुए कठोपनिषद् के लेखन काल तक मूर्तिकरण की दिशा ने ज़ोर पकड़ लिया। ***अन्त में पुराणों के लेखन काल में तो मूर्तिकरण (प्रतीकीकरण) की दिशा पूर्ण रूप से मानवीकरण के ठोस धरातल तक पहुँच गयी।*** 'श्रीरामचरितमानस' एवम्

a विस्तृत जानकारी के लिए पुस्तक के भाग-3 में *मानव धर्म का आधार - गायत्री मंत्र'* नामक लेख संलग्न है।

'श्रीमद्भागवत् पुराण' तो प्रतीकीकरण एवम् मानवीकरण के सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ हैं। प्रतीकोपासना के क्रमिक विकास के कुछ उद्धरण प्रस्तुत हैं :-

3(i) संदर्भ उपनिषदों से :-

1. वैश्वानर के स्वरूप का वर्णन [a] **:-** द्युलोक (स्वर्ग) मस्तक है, सूर्य आँखें हैं, वायु प्राण है, आकाश शरीर है, जल गुर्दे हैं, पृथ्वी पाद (चरण) हैं, यज्ञ-कुंड छाती है, पवित्र दूब बाल हैं, गार्हपत्य अग्नि हृदय है - आदि आदि। (वैश्वानर = पूरे विश्व में विस्तृत नर स्वरूप परमात्मा)

2. विष्णु का वर्णन [b] **:-** जिसके मन की लगाम को विज्ञान रूपी बुद्धि नियन्त्रण में रखती है, वह साधक 'मोक्ष' को प्राप्त होता है। यही विष्णु का परम पद है।

3. सूर्य के आत्म स्वरूप का वर्णन [c] **:-** *सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च।* अर्थात् सूर्य चल एवम् अचल सम्पूर्ण प्रकृति का आत्मा है।

4. गायत्री मंत्र से :- इस विषय पर ऊपर लिखा जा चुका है।

5. आत्मपुरुष का वर्णन [d] **:-** *अंगुष्ठ मात्रः पुरुषो ज्योतिरिवाधूमकः।*

अर्थ :- परमात्मा अँगूठे के आकार का, बिना धुँयें का ज्योति स्वरूप है। इस मंत्र की विशेष बात यह है, कि इसमें गायत्री मंत्र से आगे बढ़कर प्रकाश को एक निश्चित आकार (ज्योति) प्रदान किया गया है।

6. रामचरित मानस से - ***भवानी शंकरौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ*** [e] ***।***

अर्थ :- भवानी और शंकर श्रद्धा और विश्वास के रूप अर्थात् प्रतीक हैं।

भरत जी श्रीराम की पाँवरी पूजते हुए

चित्र : 4.03

इस पद में आकाशगंगा में स्थित न्यूट्रॉन तारों से निर्मित केन्द्रीय स्तम्भ में व्याप्त अव्यक्त चेतन बल शंकर को मानवीय स्वरूप प्रदान किया गया है। साथ में व्यक्त प्रकृति को स्त्रीरूपा भवानी के रूप में कल्पित किया गया है। इस पद से आगे के उद्धरणों में सभी प्रतीकों का मानवीकरण कर दिया गया है।

दो.- नित पूजत प्रभु पाँवरी, प्रीति न हृदय समाति।
माँगि माँगि आयसु करत, राज काज बहु भाँति [f] ***।।***

अर्थ :- भरत जी श्रीराम जी की पादुकाओं को श्रीराम का ***'प्रतीक'*** मान कर नित्य पूजन करते हैं और आज्ञा माँग-माँग कर राज्य का कार्य करते हैं।

दो. - सगुण उपासक परहित, निरत नीति दृढ़ प्रेम।
ते नर प्रान समान मम, जिन्ह के द्विज पद प्रेम [g] ***।।***

इस दोहे में सगुण उपासना को श्रीराम जी द्वारा श्रेष्ठ बतलाया गया है। इसी प्रकार

---

a छान्दोग्य उपनिषद् - V.18.1-2 *b* कठोपनिषद् - I.3.9 *c* ऋक् वेद - I.115.1
d कठोपनिषद् - 2.4.13 *e श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड का प्रथम श्लोक*
f श्रीरामचरितमानस अयोध्याकाण्ड दो. 325 *g श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड दो. 48*

गीता अध्याय-12, श्लोक सं. 2 [a] में भी श्रीकृष्ण अर्जुन को समझाते हैं, कि जो भक्त अति श्रद्धापूर्वक ***'सगुण-साकार'*** रूप से मेरी उपासना करते हैं, वे मेरे मत में सर्वश्रेष्ठ योगी हैं।

3(ii) सगुण उपासना में देव शक्तियों का रंगों से सम्बन्ध :- दृश्यमान प्रकाश, लगभग 10^{14} से 10^{15} आवृत्तियों के अन्तर्गत स्थित है, जो विश्वव्यापी चुम्बकीय विद्युत ऊर्जा [b] का एक अंश मात्र है। इस दृश्यमान अंश के सात रंगों की पट्टिका (VIBGYOR) का जिन-जिन देव शक्तियों से सम्बन्ध है, उसका विवरण उनसे सम्बन्धित स्तुतियों से लिया गया है। साधकों की जानकारी के लिए ध्यान-साधना हेतु वह विवरण क्रमवार नीचे दिया जा रहा है :-

देवता का नाम	*रंग*	*स्पन्दन प्रति सेकंड (Frequency)*	*तरंग दीर्घता (Wave Length)*
1. ~~ब्रह्म~~ (~~राम एवम् कृष्ण~~)	श्याम	$7.90 - 6.80 \times 10^{14}$	3800 – 4300 Å
2. ~~आकाश तत्त्व~~ (~~ब्रह्म का चित्त~~)	नील	$6.80 - 6.70 \times 10^{14}$	4300 – 4500 Å
3. विष्णु	नीला	$6.70 - 6.10 \times 10^{14}$	4500 – 4900 Å
4. गणेश	हरा	$6.10 - 5.40 \times 10^{14}$	4900 – 5500 Å
5. देवी	पीला	$5.40 - 5.10 \times 10^{14}$	5500 – 5900 Å
6. हनुमान	नारंगी	$5.10 - 4.60 \times 10^{14}$	5900 – 6500 Å
7. भैरव	लाल	$4.60 - 3.90 \times 10^{14}$	6500 – 7600 Å

यदि मानव उपरोक्त आवृत्तियों के अनुरूप अपने मन को एकाग्र कर ले, तो इन शक्तियों से जीवन के अनेक क्षेत्रों के कार्य साधे जा सकते हैं। साधना का यही उद्देश्य है, पर अब यह सब ज्ञान लुप्त हो चुका है, मात्र अंधविश्वास एवम् कथाएं ही शेष रह गयी हैं। विज्ञान ने लेज़र (Laser) और क्ष-किरण (X-Ray), जो चुम्बकीय विद्युत तरंगों के ही अंश हैं, का प्रयोग मानव हित में करना तो सीख लिया है, क्योंकि इससे मानव के रोगों के उपचार एवम् निदान में बहुत भारी सहायता मिली है, परन्तु अभी उपरोक्त आवृत्तियों के दोहन से होने वाले आध्यात्मिक एवम् भौतिक लाभ की ओर ***विज्ञान का ध्यान नहीं गया है।*** उपरोक्त सातों रंगों से मानव मन निरन्तर प्रभावित होता रहता है तथा जीवन में इन रंगों की आवृत्तियों के प्रभाव में आकर वह अच्छे व बुरे सभी प्रकार के कर्म भी करता है।

यदि संस्कृत तथा विज्ञान को कम से कम बारह कक्षा तक अनिवार्य कर दिया जाये, तो

---

a ***मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते। श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः।।*** *(गीता-12/2)*
अर्थ :- श्री भगवान बोले - मुझमें मन को एकाग्र करके निरन्तर मेरे भजन ध्यान में लगे हुए जो भक्तजन अतिशय श्रेष्ठ श्रद्धा से युक्त होकर ***'मुझ सगुण रूप परमेश्वर को'*** भजते हैं वे मुझको योगियों में अति उत्तम योगी मान्य हैं।

b 'विश्वव्यापी चुम्बकीय विद्युत ऊर्जा' का चित्र संख्या-4.05 इसी सत्र में आगामी पृष्ठों पर है।

भावी पीढ़ी वैदिक संस्कृति को भली प्रकार समझ सकेगी तथा विवेकपूर्ण ज्ञान से भारत पर हावी हो रही पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव से भारतीय उबर सकेंगे।

3(iii) पुराण :- पुराणों में देव प्रतीकों को आधार बना कर, अनेक शिक्षाप्रद कथाओं को सम्वाद रूप में लिखा गया है। ***उपनिषदों का सरलीकृत रूप पुराण हैं।***

यद्यपि वैदिक काल के प्रारम्भ में ही प्रतीकों का विचार बीज रूप से उपस्थित था, फिर भी द्वापर में सगुणोपासना की प्रथा अधिक खुलकर समाज में प्रचलित हुई, जैसा कि श्रीमद्भगवद् गीता के (12/2) उद्धरण से स्पष्ट होता है। शुद्ध वैदिक काल में प्रतीकों की अवधारणा तो थी, परन्तु जैसे-जैसे मानव भौतिकता की ओर बढ़ता गया, समय की माँग के साथ-साथ प्रतीकों को सुन्दर कलाकृतियों के रूप में ढाला जाने लगा तथा राम, कृष्ण, गणेश, हनुमान, विष्णु, शंकर, पार्वती आदि तमाम देवी-देवताओं की मूर्तियों का विकास किया गया, ताकि जनसाधारण की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी होती रहे और साधक ईश्वर प्राप्ति के अन्तिम लक्ष्य की ओर भी बढ़ता चला जाये। धन के अभाव में लक्ष्मी की उपासना, संकट में फँसे व्यक्ति को हनुमान की पूजा-अर्चना तथा बुद्धि के विकास एवम् विघ्न हरण हेतु श्रीगणेश का पूजन व ध्यान करने की विधियों का वैज्ञानिक ढंग से विकास किया गया। ***इस प्रकार की मानवीय प्राथमिकताओं को ध्यान में रखते हुए 'बहुदेववाद'*** [a] ***का सिद्धान्त सर्वथा उचित है, मात्र इसे ठीक से न समझने अथवा समझा सकने के कारण समाज में अज्ञानता व भ्रम फैला हुआ है।***

श्रद्धा एवम् विश्वास :- सगुण-साकार उपासना मार्गी साधकों के लिए अपनी साधना की सफलता हेतु श्रद्धा एवम् विश्वास का सहारा लेना परम आवश्यक है, जिसकी खोज भी भारतीय मनीषियों ने ही की। 'रामचरितमानस' में संत तुलसीदास जी स्पष्ट शब्दों में कहते हैं, कि -

भवानी शंकरौ वन्दे श्रद्धा विश्वास रूपिणौ,
याभ्यां बिना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वान्तः स्थमीश्वरम्। [b]

अर्थात् भवानी और शंकर जो श्रद्धा और विश्वास के ***'प्रतीक'*** हैं, उनकी मैं वन्दना करता हूँ, जिनकी कृपा (सहायता) के बिना मानव के हृदय में स्थित ईश्वर के दर्शन सिद्धजनों को भी नहीं हो सकते।

भक्ति मार्ग के साधकों को यह विश्वास कर लेना आवश्यक है, कि -

श्रीराम की मूर्ति अथवा किसी भी देवता की मूर्ति जो मन्दिरों में स्थापित की गयी है, वह जीवन्त है, प्राणवान है। इस विश्वास को दृढ़ बनाने हेतु मूर्ति स्थापना समारोह बड़े धूम-धाम से मनाया जाता है तथा किसी प्रशिक्षित आचार्य से मूर्तियों की 'प्राण-प्रतिष्ठा' विधि-विधान से मंत्रोच्चार द्वारा करवायी जाती है। ऐसी मान्यता है, कि प्राण-प्रतिष्ठा के पश्चात् मूर्ति में मानव के सदृश जीवन का संचार हो जाता है। वह मानव की भाँति ही सर्दी-गर्मी का अनुभव करती है। भोजन व जल ग्रहण करती है तथा भगवान होने के कारण वह आशीर्वाद अथवा वरदान भी देती है। यह भी मान लेना होता है, कि साधक जिस देवता की भक्ति करता है,

a बहुदेववाद पर प्रथम सत्र के अनुच्छेद 6 (iii) के माध्यम से विशेष चर्चा की जा चुकी है।

b श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड का प्रथम श्लोक।

उसके सम्बन्ध में, जो भी पौराणिक कथा अथवा कोई भी मान्यता है, वह एकदम सत्य है। उसे अपने गुरु के वचनों पर सत्य के सदृश विश्वास होता है। इन मान्यताओं के आधार पर मूर्तियों के माध्यम से साधक के मन को आकर्षित करने तथा आनन्दित करने हेतु मूर्तियों को सुन्दर वस्त्र पहनाए तथा उन्हें समय-समय पर बदला जाता है। उनका सुन्दर से सुन्दर श्रृंगार किया जाता है। उत्तम भोजन करवाया जाता है। नित्य पालकी पर बिठा कर उन्हें उनके शयन कक्ष में ले जाकर सुलाया जाता है, इत्यादि। यह सब कार्य भक्तगण नित्य उनका कीर्तन, भजन एवम् गुणगान तथा आरती आदि के साथ करते हैं। इस प्रकार भगवान के रूप और गुणों का दिन-प्रतिदिन वे अपने चित्तपटल पर सुदृढ़ मानसिक चित्रांकन करते रहते हैं, ताकि परमात्मा की स्मृति सतत बनी रहे और अन्त समय में परमात्मा याद आ जाये।

भक्ति साधना का मार्ग सामान्य जन के लिए ***'द्वैत साधना'*** का मार्ग है। ***द्वैत साधना का अर्थ है - परमात्मा और 'मैं' (जीवात्मा) दो अलग-अलग स्तर की शक्तियाँ हैं।*** अर्थात् सभी भक्तगण जितना अधिक इस प्रकार का चित्रांकन अपने चित्त पटल पर करते हैं तथा सांसारिक क्रियाकलापों के चित्रांकन से बचे रहते हैं, उनकी चुम्बकीय टेप (आल्फा प्लेट) उतनी ही ईश्वरीय विचारों से भरी होती है और भगवान श्रीकृष्ण के अनुसार वे कृपा करके किसी जन्म में ***उस भक्त को ज्ञान-विज्ञान की समझ (बुद्धियोग) प्रदान करते हैं***[a], जिसको जानकर कुछ भी जानना शेष नहीं रहता तथा मानव कर्म-बन्धन से मुक्त हो जाता है।

अर्जुन को ज्ञान-विज्ञान का उपदेश देते भगवान श्रीकृष्ण

चित्र : 4.04

4(i) ज्ञान-विज्ञान योग (बुद्धि योग) :- सृष्टि सृजन, आत्मा-परमात्मा, मानव एवम् अन्तःकरण की रचना आदि की समझ हो जाने पर साधक धर्म को दृढ़ता से आचरण में लाता है। ऐसा करने से वह संसार के मायाजाल से सरलता से छूट सकता है। वह सही अर्थों में राग रहित हो जाता है अर्थात् उसे वैराग्य की प्राप्ति हो जाती है तथा उसके कदम परमात्मा की ओर शीघ्रता से बढ़ने लगते हैं और वह आत्म-चिन्तन करता हुआ परमात्मा को शीघ्र प्राप्त हो

---

a ***तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्। ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते।।*** *(गीता-10/10)*
अर्थ :- उन निरन्तर मेरे ध्यान आदि में लगे हुए और प्रेमपूर्वक भजने वाले भक्तों को मैं ***वह तत्वज्ञान रूप बुद्धियोग (विज्ञान आधारित ज्ञान) प्रदान करता हूँ, जिससे वे मुझको ही प्राप्त होते हैं।***
ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः। यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते।। *(गीता-7/2)*
अर्थ :- मैं तेरे लिए इस ***विज्ञान सहित तत्त्वज्ञान*** को सम्पूर्णता से कहूँगा, जिसको जानकर संसार में फिर और ***कुछ भी जानने योग्य शेष नहीं रह जाता।***
इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे। ज्ञानंविज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्।। *(गीता-9/1)*
अर्थ :- श्री भगवान बोले - तुझ दोषदृष्टि रहित भक्त के लिए इस परम गोपनीय ***विज्ञान सहित ज्ञान*** को पुनः भलीभाँति कहूँगा, जिसको जानकर तू दुःखरूप संसार से मुक्त हो जायेगा।

जाता है, क्योंकि ईश्वर (अद्वैत) तक पहुँचने का यह बहुत ही छोटा मार्ग है।

इस उपासना पद्धति में उपनिषद् के चार महावाक्यों में से किसी एक का चिन्तन करना होता है :- ***(i) सोऽहम् (जो वह है, वही मैं भी हूँ) (ii) तत्वमसि (तू भी वही है) (iii) अयम् आत्मा ब्रह्म (यह आत्मा ही ब्रह्म है) तथा (iv) अहम् ब्रह्मास्मि (मैं ब्रह्म हूँ)। ऐसा चिन्तन व मनन करते-करते वह मृत्यु को प्राप्त होकर फिर सूक्ष्म एवम् भौतिक किसी प्रकार की देह को धारण नहीं करता और अद्वैत मार्ग द्वारा 'मोक्ष' को प्राप्त हो जाता है।***

4(ii) महामानव का स्वरूप :- मानव समेत सभी प्राणियों की उत्पत्ति कर्म एवम् प्रवृत्ति के आधार पर हुई है। मानव परमात्मा की श्रेष्ठतम कृति है, जिसे उस महामानव ने अति सम्वेदनशील मस्तिष्क दिया है। यह मस्तिष्क मन, बुद्धि, चित्त एवम् अहंकार रूपी अन्तःकरण (अन्दर की मशीन) से निर्मित है, जिसकी रचना छोटी से छोटी योनि अर्थात् कीट, पतंगे, बैक्टीरिया, वायरस से लेकर मानव तक में एक जैसी है तथा सत-रज-तम क्रमशः तीन **[(±),(-),(+)]** आवेशों से आवेशित है [a], इसको 'सूक्ष्म शरीर' भी कहा जाता है, क्योंकि यह सूक्ष्म तरंगों से निर्मित है। मानव के इस सूक्ष्म शरीर में प्रज्ञा (Information=सूचनाओं) का भण्डार सर्वाधिक होता है, अतएव वह परमात्मा के बारे में प्रश्न भी पूछ सकता है और उनका उत्तर भी खोज सकता है। इसी कारण उसने भी परमात्मा अथवा परब्रह्म को, जिसका शरीर सम्पूर्ण सृष्टि है अर्थात् अरबों आकाशगंगाएं जिसका शरीर है, उसको महामानव के रूप में कल्पित किया।

4(iii) सृजन प्रक्रिया - एक परिकल्पना :- उपनिषदों में चर्चा आयी है, कि परमात्मा ने जब अपने आप को अकेला अनुभव किया, तो बहुत बन जाने (एकोऽहम् बहुस्याम्) का संकल्प किया [b]। चित्र संख्या-4.05 तथा 4.06 को एक साथ अध्ययन करने से प्राचीन ऋषियों की गहरी और सम्पूर्णता को समझ सकने की क्षमता का लोहा मानना पड़ता है। चित्र संख्या-4.05 में चुम्बकीय विद्युत तरंगों की उच्चतम आवृत्ति (Frequency) 10^{29} चक्र प्रति सेकंड दर्शायी गई है, जिसे विश्वव्यापी शक्ति किरण (Cosmic Ray) कहा गया है। इसके समानान्तर चित्र संख्या-4.06 में परमात्मा जब सुप्तावस्था में था, तब परमात्मा के चित्ताकाश (Supreme Computer) में सृजन, पालन एवम् संहार की पूरी जानकारी (CD) भरी हुई थी, लेकिन संकल्प (इच्छा) करते ही वह गामा (सत) तरंगों में

चुम्बकीय विद्युत तरंगों का विश्वव्यापी विस्तार

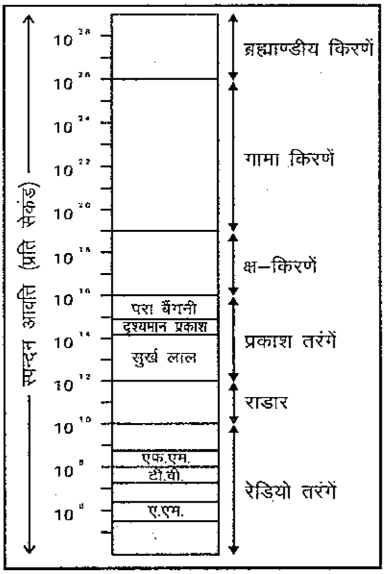

चित्र-4.05

---

a इस विषय पर ***द्वितीय सत्र*** में चित्र संख्या-2.03 सहित विस्तार से चर्चा की जा चुकी है।

b इस सम्बन्ध में *'सृजन प्रक्रिया-एक परिकल्पना'* का चित्र संख्या-4.06 पर है।

अव्यक्त रूप से व्याप्त महेश्वर के रूप में परिवर्तित हो गया। इच्छा (संकल्प) के परिणामस्वरूप चुम्बकत्व घट गया तथा प्रकाश क्षेत्र में वृद्धि हो गयी। तत्पश्चात् मानव की भाँति ही महामानव के भी अन्तःकरण के चारों अंग (मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार) विकसित हो गये [a]।

भारतीय मनीषियों ने चित्र संख्या-4.06 पर प्रतीकों की भाषा में उल्लिखित महामानव के सूक्ष्म शरीर (मन, बुद्धि, चित्त एवम् अहंकार) के यथोचित नाम सुझाए हैं। इस स्तर तक के विकास की परिकल्पना लगता है, ***कि परावर्ती काल में अमान्य हो गयी थी, क्योंकि इस मान्यता को अधिक बल दिया गया, कि सृष्टि का कभी आरम्भ हुआ ही नहीं था, यह तो अनादि है।*** लेकिन जिस प्रकार मानव के सूक्ष्म शरीर की उत्पत्ति अपनी आकाशगंगा में उपलब्ध तीन सत, रज एवम् तम तरंगों के संयोग से होती है, ठीक उसी प्रकार से महामानव का भी सूक्ष्म शरीर होना चाहिए, ताकि उससे शक्ति लेकर समय-समय पर असंख्य आकाशगंगाएं जन्म लेती रहें तथा शक्ति के क्षीण होने पर कृष्ण शक्ति (Dark Energy) बनती रहें। आधुनिक विज्ञान का मानना है, कि सृष्टि लगभग तेरह अरब वर्ष पूर्व महानाद से आरम्भ हुई है तथा अन्त में वह घड़ी के पैण्डुलम की भाँति अपनी पूर्वावस्था में पहुँच जायेगी तथा पुनः महानाद से आरम्भ होगी। ***परन्तु भारतीयों का निर्णय है, कि सृजन के लिए दो शक्तियों - एक मातृ-शक्ति (प्रकृति) तथा दूसरी पुरुष शक्ति (परमात्मा) का होना आवश्यक है। तीसरी शक्ति का प्रादुर्भाव दो शक्तियों की क्रिया-प्रतिक्रिया मात्र है। दूसरा निर्णय यह है, कि पूरी सृष्टि कभी आरम्भ हुई ही नहीं, यह तो शुरू से ऐसी ही है, बस कुछ आकाशगंगाएं बनती हैं, कुछ मिट जाती है। हर आकाशगंगा का निश्चित कार्यकाल है। यदि पूरी सृष्टि शुरू हुई होती, तो अनुलोम-विलोम नियम के अनुसार पूरी सृष्टि का विनाश भी निश्चित सत्य है, जो असम्भव है।*** *(इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा नवम सत्र में की गयी है)*

4(iv) दोनों चित्रों की तुलना :- 'विश्वव्यापी ऊर्जा' के चित्र में कास्मिक किरण (Cosmic Ray) को यदि आदि स्रोत अर्थात् अव्यक्त परमात्मा का सूक्ष्म शरीर मान लें तथा न्यूट्रॉन तारों से बनी हमारी आकाशगंगा का केन्द्रीय स्तम्भ 10^{19} से 10^{26} तक आवृत्ति वाली गामा तरंगों (Gama Rays) में समाहित अव्यक्त ब्रह्म के आत्मा भगवान शिव को मान लें, तो भारतीय चिन्तकों की प्रतीकों वाली भाषा से यह चित्र मेल खा जाता है। गामा तरंगों के पश्चात् जिस भाग का आगे विस्तार हुआ है वह 10^{19} आवृत्ति से नीचे की ओर ही है, जिसमें निम्न अंग हैं - *(i)* क्ष-किरण (X-Rays) *(ii)* अति-बैंजनी किरण (Ultra Violet Rays) *(iii)* दृश्यमान प्रकाश (Visible Light) *(iv)* अति सुर्ख लाल किरण (Infra Red Rays) *(v)* राडार तरंगें (Radar Waves) *(vi)* F.M. (Frequency Modulated) *(vii)* T.V. (Television Waves) *(viii)* रेडियो तरंगे (Radio Waves) तथा *(ix)* A.M. (Amplitude Modulated) तरंगें आदि। ऐसा लगता है, कि सम्पूर्ण प्राणी जगत $10^{14}–10^{15}$ आवृत्तियों (दृश्यमान प्रकाश) के अन्तर्गत ही जीवित हैं। उनकी आँखों की देखने की क्षमता उपरोक्त आवृत्तियों के भीतर ही है, क्योंकि तभी तो वे इन आवृत्तियों से ऊपर तथा तथा इससे नीचे वाले क्षेत्र को देख ही नहीं पाते।

---

a चित्र संख्या-4.06 में उल्लिखित परिभाषाएं आगामी पृष्ठ पर हैं।

इतना छोटा-सा भाग पूरे विश्वव्यापी ऊर्जा क्षेत्र का अंश मात्र है। यही बात तो श्रीमद्भगवद् गीता में भगवान श्रीकृष्ण भी कह रहे हैं, कि दृश्मान जगत को परमात्मा ने अपनी अनन्त योग शक्ति के बहुत छोटे-से अंश से धारण किया है अर्थात् सृजन किया है [a]। ऐसा प्रतीत होता है, कि आवृत्तियों की शून्य अवस्था कृष्ण पदार्थ (Dark matter) में परिवर्तित हो जाती है, जो कालान्तर में कृष्ण शक्ति (Dark Energy) में बदल जाती है। तत्पश्चात् इसी कृष्ण शक्ति (Dark Energy) से आकाशगंगाओं का सृजन हो जाता है। यह एक वृत्त (Cycle) है, जो प्रकृति के चक्र के शाश्वत सिद्धान्तानुसार सतत कार्य करता है।

इस सम्बन्ध में पञ्चम सत्र के अनुच्छेद पांच के ***'श्रीकृष्ण'*** शीर्षक के अन्तर्गत विशेष रूप से चर्चा की गयी है। आधुनिक विज्ञान को इस विषय पर विस्तृत शोध करना अभी शेष है।

भारतीय मनीषियों ने अपने सूक्ष्म अध्ययनों से यह पाया, कि मानव की भौतिक रचना और आकाशगंगा (विराट पुरुष) की भौतिक रचना में समानान्तरता है। मानव की आत्मा जिस प्रकार से सात कोशों के भीतर निवास करती है, उसी प्रकार से परमात्मा भी विशाल सात कोशों (घेरों) के भीतर वास करता है। *इस विषय पर **द्वितीय सत्र** में अनुच्छेद छह के अन्तर्गत चित्र संख्या-2.11 के माध्यम से विस्तार से चर्चा की जा चुकी है।* इसके अतिरिक्त उन ऋषियों को फलित ज्योतिष के गम्भीर अध्ययन से यह भी ज्ञात हुआ, कि मानव अन्तःकरण (मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार) तथा विराट (आकाशगंगा) के विभिन्न अवयवों (चन्द्रमा-ग्रह, सूर्य, राशियाँ तथा नक्षत्रों) के व्यवहार में परस्पर समानान्तरता है, इस प्रकार उन्होंने ***''यथापिण्डे तथा ब्रह्माण्डे''*** जैसे महान सूत्र की स्थापना की।

4(v) हमारी आकाशगंगा का सृजन :- इस क्रम में सर्वप्रथम एक स्वर्णिम अण्डे (हिरण्यगर्भ) का निर्माण हुआ। इस विशाल अण्डे में चेतना का संचरण करने हेतु परमात्मा की चैतन्य-सत्ता (पराप्रकृति) भगवान वासुदेव ने वास किया और अण्डे के पक जाने पर वह फटा। उससे भगवान महेश्वर (न्यूट्रॉन तारा समूह) का जन्म हुआ। वह महेश्वर एक विशाल न्यूट्रॉन तारों के प्रकाश स्तम्भ के रूप में प्रकट हुए [b]। हमारी आकाशगंगा का केन्द्रीय स्तम्भ एक लाख प्रकाश वर्ष लम्बा है, कदाचित् शिव पुराण में उल्लिखित अग्नि स्तम्भ के प्रकटीकरण का यही अर्थ है।

भारतीयों का मानना है, कि स्वर्णिम अण्डा (हिरण्य गर्भ) के सृजन का सम्बन्ध किसी एक आकाशगंगा की उत्पत्ति से है। भारतीय मनीषियों ने अपनी आकाशगंगा को विराट पुरुष की संज्ञा दी है तथा उसमें जो अव्यक्त चेतन बल क्रियाशील हैं, उनका प्रतीकों की भाषा में निम्न प्रकार से नामकरण किया है -

(a) चित्त = विष्णु, धन (+) चार्ज   *(c)* बुद्धि = ब्रह्मा, ऋण (-) चार्ज तथा
(b) अहंकार = शिव, सम (±) चार्ज   *(d)* मन = चन्द्रमा, ऋण (-) चार्ज

---

*a **अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन। विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्।।** (गीता-10/42)*
अर्थ :- अथवा हे अर्जुन ! इस बहुत जानने से तेरा क्या प्रयोजन है ? मैं इस सम्पूर्ण जगत को अपनी योग शक्ति के एक ***'अंश'*** मात्र से धारण करके स्थित हूँ।

b शिव पुराण, रुद्र संहिता, तेरहवाँ संस्करण, गीता प्रेस, गोरखपुर, वि0सं0 2057, पृष्ठ-104

उपरोक्त चारों शक्तियों के पीछे जो इनको जोड़ने वाली एकीकृत अव्यक्त शक्ति है, उसको ***'ब्रह्म'*** कहा गया है। वह ***'ब्रह्म'*** अदृश्य रहकर इन सभी शक्तियों का नियमन करता है [a]।

न्यूट्रॉन तारों के स्तम्भ से महान तेजस्वी प्रकाश (तेजस) निरन्तर प्रसारित होता रहता है तथा चारों ओर ऊर्जा कणों का विकीरण भी होता रहता है। अरबों आकाशगंगाओं के सतत गतिशील रहने के कारण निरन्तर ***'ॐ'*** ध्वनि की गूँज होती रहती है, साथ में 'गतिज ऊर्जा' (Kinetic Energy) भी उत्पन्न होती है। यह 'गतिज ऊर्जा' अन्य सात प्रकार की शक्तियों (Energies), जैसे 'कूष्माण्डा' (Chemical), 'कात्यायनी' (Nuclear), 'कालरात्रि' (Thermal), 'ब्रह्मचारिणी' (Magnetic), 'चन्द्रघण्टा' (Sound), 'महागौरी' (Light), 'सिद्धिधात्री' (Electricity) में परिवर्तित होती रहती है और इस प्रकार सृष्टि का कार्य सुचारु रूप से चलता रहता है। नौवीं शक्ति 'शैलपुत्री' (Potential) तो आदि शक्ति हैं, जिससे सभी अन्य शक्तियाँ उत्पन्न हुई हैं। जब भी कोई एक आकाशगंगा अपनी सुप्तावस्था में होती है, तब सम्पूर्ण शक्ति 'शैलपुत्री' के रूप में ही विद्यमान रहती है, परन्तु जैसे ही ईश्वर प्रेरणा से सृष्टि में गति आती है, सभी शक्तियाँ बारम्बार आपस में परिवर्तित होनी आरम्भ हो जाती हैं, ताकि सृष्टि का कार्य सुचारु रूप से चलता रहे।

उपासना हेतु विधान :- 'प्रणव' की ध्वनि को परमात्मा के पवित्रतम नाम (सांकेतिक चिह्न) के रूप में सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया तथा आकाशगंगा को ***'ब्रह्म'*** का स्वरूप मानकर शिवलोक तथा बैकुण्ठ लोक के संयुक्त तारामण्डलों से बना ***'ॐ'*** का चित्र पूजा-अर्चना के लिए मान लिया गया। इस प्रकार भारतीय चिन्तकों ने निराकार परमात्मा को साकार रूप दिया। इस विधि से सगुण ***'ॐ'*** का ध्यान तथा जप करने से हम ऊर्जा के मूल स्रोत आकाशगंगा से जुड़ कर असीम शक्ति का दोहन कर सकते हैं।

4(vi) (परमात्मा से) सृष्टि सृजन प्रक्रिया - एक परिकल्पना

(चित्र सं. 4.06, पृष्ठ संख्या 106A)

A. परमात्मा से सृजन :-

परिभाषाएं :-

a. परम तत्त्व :- चैतन्य, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, अजन्मा, निर्गुण-निराकार, एक मात्र अनन्त सत्ता।

b. चित्ताकाश :- यह परमात्मा का चित्तपटल है, जिसमें 'सृजन, पालन एवम् संहार' प्रक्रिया की सम्पूर्ण जानकारी निहित है (A Store house of Memories containing Computer Disc Replete with details of creation, sustenance and destruction)। परमात्मा के चित्ताकाश का एक नाम महाकाश भी है।

---

a Einstein, in particular spent the last years of his life searching for such a unified field. The ***'Brahman'*** of Hindus .... can be seen perhaps, as the ultimate unified field from which spring not only the phenomena studied in Physics but all other phenomena as well.

(Page-234 Tao of Physics, 3rd Edition, Publishers M/s. Flamingo)

सृष्टि सृजन प्रक्रिया - एक परिकल्पना

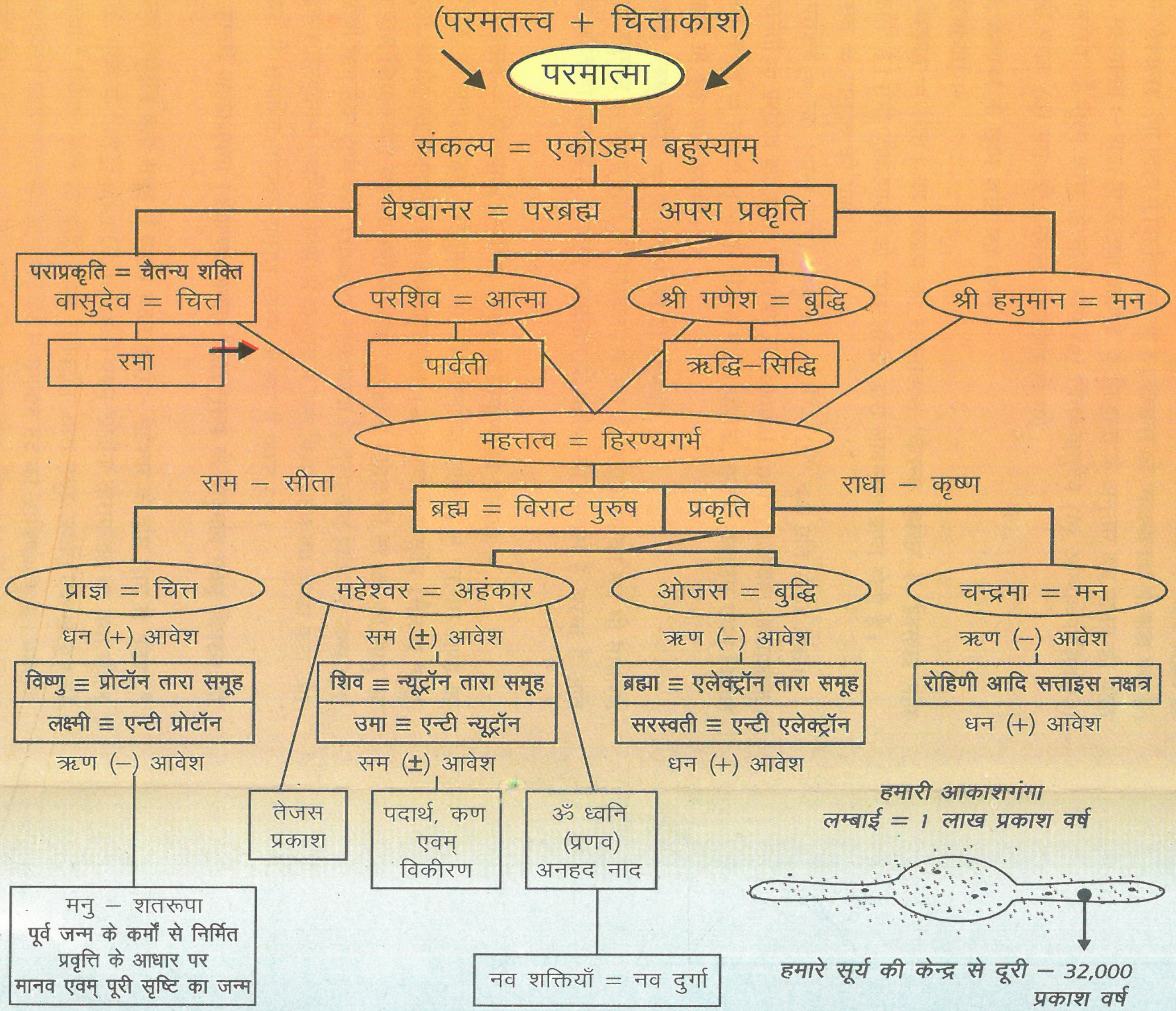

हमारी आकाशगंगा
लम्बाई = 1 लाख प्रकाश वर्ष

हमारे सूर्य की केन्द्र से दूरी – 32,000 प्रकाश वर्ष

परमात्मा के गुण

1.	स्वयंभू	अजन्मा
2.	चेतन शक्ति	सर्वव्यापक
3.	आनन्द शक्ति	सर्वशक्तिमान
4.	ज्ञानशक्ति	सर्वज्ञानमय
5.	इच्छा शक्ति	अनन्तसत्ता
6.	क्रिया शक्ति	निर्गुण-निराकार

टिप्पणी :-

1. *परमात्मा के चित्ताकाश में सम्पूर्ण ज्ञान शक्ति चुम्बकीय विद्युत तरंगों के रूप में विद्यमान रहती है और उसी का प्रसार विश्व के रूप में हुआ है।*
2. *Proton पर रिकार्ड किए गये संस्कार किसी भी योनि में देह धारण का कारण हैं तथा देह का निर्माण कार्य कोशिकाओं के विभाजन अर्थात् शतरूपा (Cell division) द्वारा पूर्ण होता है।*
3. *सभी आकाशगंगाएं अव्यक्त परमात्मा के शरीर के अंग हैं। ये सभी आकाशगंगाएं एक निश्चित कालावधि में मृत हो जाती हैं तथा अन्य गंगाओं से प्राप्त फोटॉन कणों द्वारा पुन: जीवित हो जाती हैं। इस प्रकार यह चक्र सतत् चलता रहता है।*

*नोट :- उपरोक्त परिकल्पना के चित्रण का यह अर्थ न लिया जाये, कि किसी भी काल में सृष्टि का प्रारम्भ हुआ था । **भारतीय मनीषियों के अनुसार सृष्टि अनादि है।***

शक्ति (दुर्गा) के नौ रूप - एक कल्पना

1.	शैलपुत्री	≡	(Potential)
2.	स्कन्दमाता	≡	(Kinetic)
3.	कूष्माण्डा	≡	(Chemical)
4.	सिद्धिदात्री	≡	(Electricity)
5.	कात्यायनी	≡	(Nuclear)
6.	कालरात्रि	≡	(Thermal)
7.	ब्रह्मचारिणी	≡	(Magnetic)
8.	चन्द्रघंटा	≡	(Sound)
9.	महागौरी	≡	(Light)

Index :

= समान

≡ अव्यक्त रूप से व्याप्त

उदाहरण :-

विष्णु ≡ प्रोटॉन तारा समूह में अव्यक्त रूप से व्याप्त

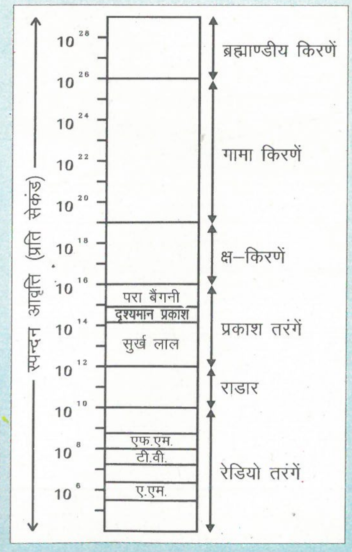

विश्वव्यापी चुम्बकीय ऊर्जा शक्ति का विस्तार

c. एकोऽहम् बहुस्याम् :- परमात्मा ने एक से अनेक बन जाने का संकल्प किया। तब परमात्मा दो रूपों में अर्थात् 'परब्रह्म' एवम् 'अपरा' प्रकृति के रूप में विकसित हो गया। परब्रह्म का एक नाम **'वैश्वानर'** (पूरे विश्व में विस्तीर्ण नर) भी है। वैश्वानर को **'महामानव'** भी कहा गया है।

d. महामानव :- 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' के सिद्धान्त के अनुसार तब मानव की भाँति ही 'महामानव' के सूक्ष्म शरीर के चारों भाग *(a)* चित्त=वासुदेव *(b)* आत्मा=परशिव *(c)* बुद्धि=श्री गणेश *(d)* मन=श्री हनुमान, प्रकाशित हो गये।

B. वैश्वानर के सूक्ष्म शरीर का वर्णन :-

परिभाषाएं :-

• **वासुदेव** = चित्त। यह परब्रह्म की सृजनात्मक **'चैतन्य शक्ति'** है, जिसका नाम 'परा-प्रकृति' है। सभी जीवात्माओं को **'परा-शक्ति'** द्वारा जीवन्तता प्राप्त होती है।

• **रमा** = वासुदेव की पत्नी।

• **परशिव** = सत (गामा तरंगे) आवृत्ति = 10^{19}–10^{26} चक्र प्रति सेकंड तक।

• **पार्वती** = परशिव की पत्नी, 'शैलपुत्री' (Potential Energy) अर्थात् आद्याशक्ति।

• **श्री गणेश** = सम्पूर्ण सृष्टि के योजना मंत्री। योजना, सृजन, संचालन एवम् विनाश प्रक्रिया क्रम के एक मात्र स्वामी।

• **ऋद्धि एवम् सिद्धि** = श्री गणेश की दो पत्नियाँ।

• **श्री हनुमान** = श्री हनुमान जी महामानव के मन हैं। महामानव का मन भी साधारण मानव की भाँति ही चञ्चल है, अतएव चञ्चलता के प्रतीक श्री हनुमान हैं, परन्तु हैं अति बलशाली।

C. महत्तत्व = हिरण्यगर्भ (स्वर्णिम अण्डे) के निर्माण की प्रक्रिया :-

परशिव, श्री गणेश एवम् श्रीहनुमान जी की सम्मिलित शक्तियों से स्वर्णिम अण्डे का निर्माण हुआ, अर्थात् हाइड्रोजन गैस का घना बादल बना। उस अण्डे में वासुदेव **(चैतन्य 'परा' शक्ति)** ने वास किया। जैसे गर्भवती स्त्री के अण्डे (ova) में मानव की सौ वर्ष की आयु का लगभग सौवाँ भाग तक पुरुष कीट (sperm) वास करता है, तत्पश्चात् शिशु का जन्म होता है, उसी प्रकार हिरण्यगर्भ (स्वर्णिम अण्डे) में वासुदेव ने वास किया। तब वह अण्डा फटा और न्यूट्रॉन तारों में समाहित महेश्वर, प्रकाश स्तम्भ के रूप में प्रकट हुए।

D. हमारी आकाशगंगा (ब्रह्माण्ड) अर्थात् विराट पुरुष के प्रादुर्भाव एवम् विघटन की प्रक्रिया :-

महेश्वर (न्यूट्रॉन तारा समूह में व्याप्त चेतन बल) :- महेश्वर के वाम भाग से 'विष्णु'[a] अर्थात् विराट पुरुष के चित्त (Super Computer) एवम् 'प्रोटॉन' तारामण्डल का तथा दक्षिण भाग से 'ब्रह्मा'[a] (विराट पुरुष के बुद्धि) एवम् 'एलेक्ट्रॉन' तारा समूह अर्थात् एक खरब सूर्यों का प्राकट्य हुआ। तत्पश्चात् ब्रह्मा जी की भृकुटि से भगवान रुद्र का आविर्भाव हुआ। भगवान रुद्र 'न्यूट्रीनों' कणों में समाहित रहकर तीनों (विष्णु लोक, ब्रह्म लोक तथा शिव लोक) लोकों

---

a शिव पुराण, रुद्र संहिता, तेरहवाँ संस्करण, गीता प्रेस, गोरखपुर, वि०सं० 2057 पृष्ठ-101, 103 एवम् 109

का सतत विघटन करते रहते हैं। अन्त में पूरी आकाशगंगा इकत्तीस नील, दस खरब, चालीस अरब वर्ष में अपनी कालावधि पूरी करके 'न्यूट्रॉन' तारामण्डल में सिमट जाती है और तत्पश्चात् न्यूट्रॉन तारामण्डल भी कृष्ण शक्ति (Dark Energy) बन कर अदृश्य हो जाता है [a]।

E. पृथ्वी मण्डल का विकास :-

हमारे सौर परिवार का मुखिया अपना सूर्य आकाशगंगा में स्थित एक खरब सूर्यों में एक है। इस सूर्य से पृथ्वी, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, मंगल आदि ग्रहों की उत्पत्ति हुई है। हमारी पृथ्वी से चन्द्रमा की उत्पत्ति हुई। चन्द्रमा पृथ्वी का उपग्रह है। 'एलेक्ट्रॉन' तारा समूह का सदस्य चन्द्रमा पृथ्वी के अत्यधिक निकट है, अतः चन्द्रमा का मानव मन पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है, इसीलिए इसे धर्म ग्रंथों में ***'अव्यक्त ब्रह्म'*** का मन कहा गया है।

F. ब्रह्माण्ड (आकाशगंगा) से सम्बन्धित अन्य अवशिष्ट परिभाषाएं :-

***i.* महेश्वर न्यूट्रॉन तारासमूह में व्याप्त (ब्रह्म के अहंकार अथवा आत्मा) :-** न्यूट्रॉन तारा समूह से सतत् श्वेत प्रकाश (तेजस) चारों ओर प्रसारित होता रहता है। लगता है, कि हमारी आकाशगंगा के लिए यह प्रकाश का प्रथम और सर्वोच्च स्रोत है। इस तारामण्डल का आवेश सम (±) है।

***ii.* विकीरण :-** इस न्यूट्रॉन तारा स्तम्भ से सतत् न्यूट्रॉन कणों का प्रसारण भी होता रहता है।

***iii.* उमा :-** इन्हें शक्ति रूपा तथा शिव पत्नी माना जाता है। प्रकृति के नियमानुसार न्यूट्रॉन का प्रतिकण एन्टीन्यूट्रॉन है, अतः एन्टीन्यूट्रॉन कण सम (±) चार्ज उमा शक्ति को धारण करता है।

***iv.* ॐ ध्वनि :-** हमारी आकाशगंगा सहित सभी आकाशगंगाओं की निरन्तर गतिशीलता से 'ॐ' ध्वनि की उत्पत्ति होती रहती है, इसे प्रणव तथा अनहद नाद भी कहा गया है।

***v.* सरस्वती :-** इन्हें ब्रह्मा की पत्नी तथा ज्ञान की देवी माना जाता है। क्योंकि एलेक्ट्रॉन का प्रतिकण 'पॉजीट्रॉन' है, अतः पॉजीट्रॉन धन (+) चार्ज सरस्वती शक्ति को धारण करता है।

***vi.* रोहिणी :-** चन्द्रमा की पत्नी का नाम रोहिणी है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार 'रोहिणी' सहित चन्द्रमा कुल सत्ताइस नक्षत्रों का पति है। इस प्रतीकात्मक भाषा का यह अर्थ हो सकता है, कि जब-जब चन्द्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करते हुए इन नक्षत्रों की सीधी रेखा में आता है, तब-तब उन नक्षत्रों की चुम्बकीय शक्ति से प्रभावित होकर मानव मन अलग-अलग ढंग से व्यवहार करता है अथवा ऐसी युति विशिष्ट घटनाओं को जन्म देती है।

***vii.* लक्ष्मी :-** इन्हें विष्णु की पत्नी तथा धन की देवी माना जाता है। चूँकि प्रोटॉन का प्रतिकण 'एन्टी प्रोटॉन' है, अतः एन्टी प्रोटॉन ऋण (–) चार्ज लक्ष्मी शक्ति को धारण करता है।

***viii.* नव दुर्गा :-** अनहद नाद (ॐ ध्वनि) के साथ-साथ आकाशगंगाओं की गतिशीलता से गतिज-ऊर्जा (Kinetic energy) का सतत प्रसारण होता रहता है। यह गतिज ऊर्जा अन्य सात शक्तियों में लगातार परिवर्तित हो-होकर पृथ्वीवासियों के जीवन को क्रियाशील बनाए रखती है। इन सभी शक्तियों के नाम चित्र संख्या-4.06 में दिए गये हैं।

---

a इस सम्बन्ध में ***प्रथम सत्र*** में चित्र संख्या-1.05 के माध्यम से *'सृष्टि निर्माण, पालन एवम् संहार-एक वैज्ञानिक परिकल्पना'* शीर्षक के अन्तर्गत इस प्रक्रिया का विस्तार से वर्णन किया गया है।

LONG FORM OF THE PERIODIC TABLE

s block (Light Metals) ⟷ | d block (Heavy Metals or Transition Metals) ⟷ | p block (Non-Metals) ⟷

(Metallic Character Increases) ↓ PERIODS

Atomic number Symbol Name Relative atomic mass

Period	1 I A	2 II A	3 III B	4 IV B	5 V B	6 VI B	7 VII B	8 ← VIII B	9 VIII B	10 VIII B →	11 I B	12 II B	13 III A	14 IV A	15 V A	16 VI A	17 VII A	18 VIII A or 0
1	1 H Hydrogen 1.0																	2 He Helium 4.0
2	3 Li Lithium 6.9	4 Be Berylium 9.0											5 B Boron 10.8	6 C Carbon 12.0	7 N Nitrogen 14.0	8 O Oxygen 16.0	9 F Fluorine 19.0	10 Ne Neon 20.2
3	11 Na Sodium 23.0	12 Mg Magnesium 24.3											13 Al Aluminium 27.0	14 Si Silicon 28.1	15 P Phosphorus 31.0	16 S Sulphur 32.1	17 Cl Chlorine 35.5	18 Ar Argon 39.9
4	19 K Potassium 39.1	20 Ca Calcium 40.1	21 Sc Scandium 45.0	22 Ti Titanium 47.8	23 V Vanadium 50.9	24 Cr Chromium 52.0	25 Mn Manganese 54.9	26 Fe Iron 55.9	27 Co Cobali 58.9	28 Ni Nickel 58.7	29 Cu Copper 63.5	30 Zn Zinc 65.4	31 Ga Gallium 69.7	32 Ge Germanium 72.6	33 As Aronic 74.9	34 Se Selenium 79.0	35 Br Bromine 79.9	36 Kr Krypion 83.5
5	37 Rb Rubidium 85.5	38 Sr Strontium 87.6	39 Y Yttrium 88.9	40 Zr Zirconium 91.2	41 Nb Niobium 92.9	42 Mo Molybdenum 95.9	43 Tc Technetium (99)	44 Ru Ruthenium 101.1	45 Rh Rhodium 102.3	46 Pd Palladium 106.4	47 Ag Silver 107.9	48 Cd Cadmium 112.4	49 In Indium 114.8	50 Sn Tin 118.7	51 Sb Antimony 121.8	52 Te Tellurium 127.6	53 I Iodine 126.9	54 Xe Xenon 131.3
6	55 Cs Caesium 132.9	56 Ba Barium 137.3	57 La* Lanthanum 138.9	72 Hf Hafnium 178.5	73 Ta Tantalum 181.0	74 W Tungsten 183.9	75 Re Rhenium 186.2	76 Os Osmium 190.2	77 Ir Iridium 192.2	78 Pt Platinum 195.1	79 Au Gold 197.0	80 Hg Mercury 200.6	81 Ti Thallium 204.4	82 Pb Lead 207.2	83 Bi Blamuth 209.0	84 Po Polonium (210)	85 At Astatine (210)	86 Rn Radon (222)
7	87 Fr Francium (223)	88 Ra Radium (226)	89 Ac** Actinium (227)	104 Rf Rutherfordium (261)	105 Db Dubnium (262)	106 Sg Searborgium (263)												

Noble Gases

← (Mettalic Character Increases)

f block (Inner Transition Elements) ⟷

Series														
Lanthanides* Series	58 Ce Cerium 140.1	59 Pr Praseodymium 140.9	60 Nd Neodymium 144.2	61 Pm Promethium (145)	62 Sm Samarium 150.4	63 Eu Europium 152.6	64 Gd Gadolinium 157.3	65 Tb Terbium 158.9	66 Dy Dysprosium 162.5	67 Ho Holmium 164.9	68 Er Erbium 167.3	69 Tm Thulium 168.9	70 Yb Ytterbium 173.0	71 Lu Lutetium 175.5
Actinides** Series	90 Th Thorium 232.0	91 Pa Protactinium (231)	92 U Uranium 238.1	93 Np Neptunium (237)	94 Pu Plutonium (242)	95 Am Americium (243)	96 Cm Curium (247)	97 Bk Berkelium (245)	98 Cf Californium (251)	99 Es Einstenium (254)	100 Fm Femium (253)	101 Md Mendelevium (256)	102 No Nobelium (254)	103 Lr Lawerncium (257)

चित्र : 4.08

***ix.* परब्रह्म एवम् ब्रह्म :-** विज्ञान का कथन है, कि सृष्टि में लगभग दो सौ अरब आकाशगंगाएं हैं। इन आकाशगंगाओं के एक मात्र स्वामी को वैदिक भाषा में परब्रह्म, परमात्मा, वैश्वानर एवम् महामानव के नामों से कहा गया लगता है, जबकि किसी एक आकाशगंगा के स्वामी को ब्रह्म, आत्मा अथवा विराट पुरुष के नाम से जाना गया है।

5. ब्रह्म का मानवीकृत काल स्वरूप :- ब्रह्म का मानवीकृत काल स्वरूप गीता, अध्याय ग्यारह में भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को दिखलाया था तथा महामानव (परमात्मा) के वैश्वानर स्वरूप का वर्णन छांदोग्योपनिषद् में इसी सत्र के प्रारम्भ में बतलाया जा चुका है, ठीक ऐसी ही एक परिकल्पना 'रामचरितमानस' में ब्रह्म के सम्बन्ध में दी गयी है। 'श्रीराम' को 'ब्रह्म' का अवतार बतलाते हुए मन्दोदरी (रावण की पत्नी) रावण को समझाते हुए कहती है - हे रावण !

दो.-अहंकार शिव, बुद्धि अज, मन ससि चित्त महान। मनुज बास सचराचर, रूप राम भगवान[a] ।।

अर्थ :- 'राम' जो मनुष्य रूप में अवतरित हुए हैं, 'शिव' उनकी आत्मा (अहंकार) हैं, बुद्धि 'ब्रह्मा' हैं, 'विष्णु' चित्त हैं तथा 'चन्द्रमा' मन हैं।

इस प्रकार प्रकृति पर आधारित सनातन (मानव) धर्म के वैज्ञानिक स्वरूप को दो सुन्दर वस्त्रों में सजा कर सुन्दरतम और श्रेष्ठतम हिन्दू सनातन संस्कृति तैयार की गयी है। मानव रूप प्रदान करना, शरीर पर पहने जाने वाला ऊपर वाला वस्त्र है तथा कथाएं एवम् काव्य से भावनात्मकता जोड़ी गयी, यह शरीर का अधोवस्त्र (नीचे पहने जाने वाला वस्त्र) है।

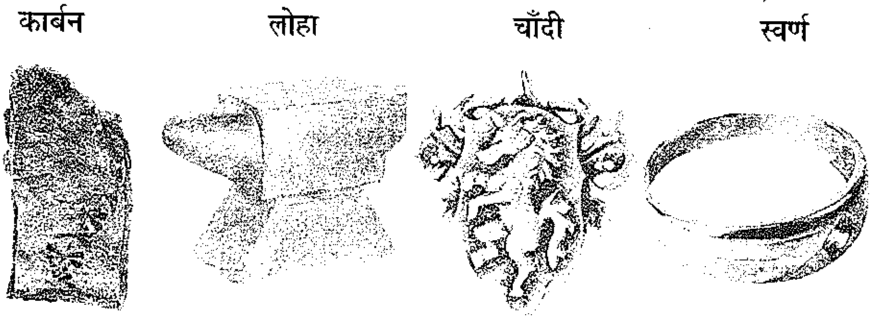

चित्र : 4.07

प्रतीकीकरण की इस परिभाषा की पुष्टि निम्नलिखित संक्षिप्त Periodic Table से और स्पष्ट हो जायेगी। इस सूची में कुछ विशिष्ट तत्त्वों (Elements) के परमाणुओं (Atoms) में संघटित कणों (Particles) की संख्या दर्शायी गयी है। *पूरी सूची (Long Form of Periodic Table) भी चित्र संख्या-4.08, पृष्ठ संख्या 109A पर संलग्न है।*

परमाणु	हाइड्रोजन	हीलियम	कार्बन	नाइट्रोजन	ऑक्सीजन	लोहा	चाँदी	स्वर्ण	यूरेनियम
एलेक्ट्रॉन कण	1	2	6	7	8	26	47	79	92
प्रोटॉन कण	1	2	6	7	8	26	47	79	92
न्यूट्रॉन कण	0	2	6	7	8	30	60	117	140

उपरोक्त संक्षिप्त सूची से स्पष्ट है, कि ***(a) हाइड्रोजन के सिवाय संसार का हर ज्ञात***

a श्रीरामचरितमानस लंकाकाण्ड दो. 15 (क)

पदार्थ एलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन एवम् न्यूट्रॉन कणों (Particles) के संयोग से बना है अर्थात् ये तीनों कण 'ब्रह्मा', 'विष्णु' एवम् 'शिव' शक्तियों की भाँति ही सर्वव्यापक हैं। (b) एक तत्व (Element) को अन्य किसी तत्व में बदला जा सकता है तथा (c) कणों की संख्या के बदले जाने से उस पदार्थ की प्रवृत्ति अर्थात् गुण पूरी तरह से बदल जाते हैं।

ईश्वर की रचना कैसी विचित्र है, कि 10 एलेक्ट्रॉन + 10 प्रोटॉन + 8 न्यूट्रॉन के संयोग मात्र से जीवन की सर्वाधिक आवश्यक वस्तु *'जल'* का एक अणु (Molecule) बन जाता है। ये तीनों कण शक्तिशाली भी बहुत हैं। ऐसा प्रतीत होता है, कि प्राचीन काल में भी इन तीनों कणों (Particles) का प्रयोग अति विनाशकारी आयुधों के निर्माण में किया जाता रहा है। आधुनिक युग के अति शक्तिशाली बमों की तुलना प्राचीन काल के अति शक्तिशाली निम्न अस्त्रों से की जा सकती है। जैसे - एटम बम को ब्रह्मास्त्र, हाइड्रोजन बम को नारायण अस्त्र तथा न्यूट्रॉन बम को पशुपति अस्त्र के समकक्ष कहा जा सकता है। वस्तुतः इन बमों की संहारक शक्ति दो प्रकार से कार्य करती है - *(i)* नाभिक का विखण्डन (Fission) होकर ऊर्जा (Energy) बाहर निकलती है तथा न्यूट्रॉन कणों का विकीरण होता है, जो भारी विनाश में सहायक होते हैं। *(ii)* नाभिक में कणों का संचयन (Fusion) होता है तब भी ऊर्जा (Energy) बाहर आती है तथा न्यूट्रॉन कणों का विकीरण भी होता है। हाइड्रोजन बम द्वारा विनाश बहुत अधिक होता है परन्तु न्यूट्रॉन बम द्वारा विनाश का क्षेत्र सीमित रहता है।

भारतीयों ने इन अलग-अलग शक्तियों के दोहन की विधि का आविष्कार 'ध्यान' द्वारा किया था। मानव अन्तःकरण की रचना भी इन तीनों कणों से मिलकर हुई है। आधुनिक विज्ञान ने इन तीनों कणों का प्रयोग कर भौतिक जीवन को सुखद बनाने में बहुत ही अहम कार्य किया है। दैनिक जीवन में काम आने वाले एलेक्ट्रॉनिक गुड्स, जैसे - हीटर, एयर कंडीशनर, पंखे, बल्ब, गीज़र, अनेक प्रकार के खिलौनों आदि का निर्माण किया गया है। ये सभी एपलाइंसिज़ (Appliances) विद्युत से चलते हैं। यह विद्युत एलेक्ट्रॉन कणों को तारों द्वारा प्रवाहित करके सभी घरों, कारखानों एवम् कार्यालयों में प्रचुरता से उपलब्ध करायी जाती है। एलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप तथा प्रोटॉन माइक्रोस्कोपों से सूक्ष्म से सूक्ष्म वस्तुओं का परीक्षण किया जाता है। न्यूट्रॉन कणों का प्रयोग कर bone density निकाली जाती है।

6. मूर्तिकरण एवम् मानवीकरण पर काव्य रचना :- सघन न्यूट्रॉन तारों से बने आकाशगंगा के केन्द्रीय स्तम्भ में व्याप्त अव्यक्त चेतन बल को शिव, सम (±) आवेश रूप मानकर संस्कृत साहित्य की एक सुन्दर काव्यात्मक स्तुति उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है।

-: स्तुति :-

नमामीशमीशान निर्वाण रूपम्, विभुम् व्यापकम् ब्रह्म वेद स्वरूपम्।
निजं निर्गुणम् निर्विकल्पम् निरीहम् चिदाकाशमाकाशवासम् भजेऽहम्।।
निराकारॐकारमूलम् तुरीयम्, गिराज्ञान गोतीतमीशम् गिरीशम्।
करालम् महाकाल, कालम् कृपालम् गुणागार संसार पारम् नतोऽहम्।।
तुषाराद्रि संकाश गौरम् गंभीरम्, मनोभूत कोटिप्रभा श्री शरीरम्।
स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारुगंगा, लसद्भाल बालेन्दु कण्ठे भुजंगा।।

चलत्कुण्डलम् भ्रूसुनेत्रम् विशालम्, प्रसन्नाननम् नीलकण्ठम् दयालम्।
मृगाधीशचर्मांम्बरम् मुण्डमालम्, प्रियम् शंकरम् सर्वनाथम् भजामि।।
प्रचण्डम् प्रकष्टम् प्रगल्भम् परेशम्, अखण्डम् अजम् भानुकोटिप्रकाशम्।
त्रयः शूल निर्मूलनम् शूलपाणिं, भजेऽहम् भवानीपतिम् भावगम्यम्।।
कलातीत कल्याण कल्पान्तकारी, सदा सच्चिदानन्द दाता पुरारी।
चिदानन्द सन्दोह मोहापहारी, प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी।।
न यावद् उमानाथ पादारविन्दम्, भजंतीह लोके परे वा नराणाम्।
न तावत्सुखम् शांति सन्तापनाशम्, प्रसीद प्रभो सर्वभूताधिवासम्।।
न जानामि योगम् जपम् नैव पूजाम्, नतोऽहम् सदा सर्वदा शम्भु तुभ्यम्।
जरा जन्म दुःखौघतातप्यमानम्, प्रभो पाहि आपन्नमामीश शम्भो।।

उपरोक्त स्तुति में विराट के न्यूट्रॉन स्तम्भ के पीछे अव्यक्त चेतन बल **'शिव'** में क्या-क्या कर सकने की क्षमता है, वह सब पूरी-पूरी जानकारी इसमें पिरो दी गयी है। हर शब्द उसी की क्षमता का गुणगान कर रहा है।

भावार्थ :- शिव कराल हैं, महाकाल हैं, निराकार हैं, गोतीत (इन्द्रियों की पहुँच से परे) हैं, व्यापक हैं, ॐकार स्वरूप (परमात्म स्वरूप) हैं, तुरीय (समाधि में परमानन्द की अनुभूति की अवस्था) हैं, कृपालु हैं, शीघ्र प्रसन्न होने वाले हैं, कोटि-कोटि सूर्यो के तेज के समान उज्जवल हैं, गौर वर्ण हैं, अपने मस्तक पर *'आकाशगंगा'*, नक्षत्रों के अधिपति चन्द्रमा एवम् शरीर पर भुजंगों को धारण करते हैं। हे शम्भो ! आप प्रचण्ड रुद्र रूप, तीनों प्रकार के शूलों (दुःखों) को निर्मूल करने वाले, कल्प का अन्त (प्रलय) करने वाले, कामदेव एवम् त्रिपुर के शत्रु, मोह का हरण करने वाले, समस्त जीवों के अन्तर में निवास करने वाले हैं। हे प्रभो ! जन्म-मृत्यु एवम् वृद्धावस्था के दुःखों से मुझ दुःखी की रक्षा कीजिए, मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

इसी प्रकार विराट के नीले प्रोटॉन तारों से बने विष्णु लोक में स्थित अव्यक्त चेतनबल विष्णु में क्या-क्या क्षमता है, इसका वर्णन निम्न संस्कृत कविता (स्तुति) में देखिए -

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं। विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभांङ्गं।।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं। वन्दे विष्णुं भवभयहरम् सर्वलोकैकनाथम्।।

अर्थ :- (बैकुण्ठ में स्थित) विष्णु का आकार शान्त है, वे सहस्रों सापों के बिस्तर पर लेटे हुए हैं। कमल नाल उनकी नाभि से निकला हुआ है। वे देवताओं के ईश्वर तथा विश्व के आधार हैं। आकाश के समान अनन्त विस्तार है। मेघों जैसा उनका रंग है तथा सभी अंग सुन्दर हैं। लक्ष्मी के पति हैं, जिनके कमल जैसे सुन्दर नेत्र हैं तथा जो योगियों के ध्यान में भी कठिनता से आते हैं; उन विष्णु भगवान की, जो संसार के भय का हरण करने वाले हैं तथा सभी लोकों के स्वामी हैं, मैं वंदना करता हूँ।

विराट में स्थित उपरोक्त दो बलों (Forces) के स्तुति सहित उदाहरण प्रस्तुत किए गये हैं। श्रीमद्भगवद् गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है, कि जो मृत्यु के समय मेरे नाम का स्मरण तथा मेरे रूप का चिन्तन करता हुआ शरीर को त्यागता है, वह मुझे ही प्राप्त होता है, इसमें कोई

संशय नहीं है [a]। अतएव इन दोनों बलों (Forces) की हज़ारों काव्यात्मक स्तुतियों का निर्माण किया जा चुका है तथा भक्तगण भाव-विभोर होकर अपनी प्रान्तीय भाषाओं में गाते नाचते हैं। इस प्रकार वे संसार को भूलकर भाव समाधि तक पहुँचने का प्रयास करते हैं। इस सब व्यायाम का एक ही लक्ष्य होता है, कि संसार को भुलाकर ईश्वरीय स्मृति को अपने चित्त (Computer) में भर लेना, ताकि मृत्यु के समय ईश्वरीय विचार सामने आ जाये और जीव परमात्मा में विलीन हो जाये।

परमात्मा सृष्टि के विस्तार हेतु कार्य सम्पादन की भिन्नता के आधार पर अपने आपको अनेक स्तर के सूक्ष्म बलों (Forces) में विभक्त कर लेता है, इसीलिए महाकाश में अनेक प्रकार के ऊर्जा कण, अणु एवम् परमाणु विचरण करते रहते हैं। इन चेतन कणों को सामान्यतया देखा नहीं जा सकता। इन कणों का बल एवम् कार्य सम्पादन क्षमता उनकी मात्रा (Mass), आवेश (Charge) एवम् स्थायित्व काल पर निर्भर करता है [b]। कुछ कण स्थायी होते हैं और इनका जीवनकाल काफी लम्बा होता है, जबकि अधिकांश कण अस्थायी रूप से बनते तथा नष्ट होते रहते हैं।

अस्थायी रूप से बनने व नष्ट होने वाले कणों को ***'ध्वनि कण'*** (Resonances) के नाम से कहा जाता है। इन कणों का जीवनकाल एक सेकंड के दस लाखवें भाग से भी कम होता है [c]।

फोटॉन, एलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन एवम् न्यूट्रीनों कण तथा इन सबके प्रतिकण भी स्थायी कण हैं। इनका जीवन काल पूरी सृष्टि की अवधि तक रहता है। प्रोटॉन कण में धन (+) आवेश (charge) तथा एलेक्ट्रॉन कण में ऋण (–) आवेश (charge) होता है। न्यूट्रॉन कण में सम (±) आवेश होता है तथा नाभि (Nucleus) से बाहर यह कण शीघ्र टूट जाता है। सृष्टि के निर्माण के प्रारम्भ में न्यूट्रॉन कणों के टूटने से प्रोटॉन, एलेक्ट्रॉन तथा न्यूट्रीनों कणों की उत्पत्ति होती है। साथ में न्यूट्रॉन कण, प्रोटॉन एवम् एलेक्ट्रॉन से मिलकर सम्पूर्ण पदार्थ जगत की रचना करता है *(Long Form of Periodic Table चित्र संख्या-4.08 पर दी गयी है)*। प्रोटॉन

---

a ***अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्। यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः।।*** *(गीता-8/5)*
अर्थ :- ***जो पुरुष अन्तकाल में मुझको ही स्मरण करता हुआ शरीर को त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूप को प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।***
अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना। परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन्।। *(गीता-8/8)*
अर्थ :- हे पार्थ ! यह नियम है, कि परमेश्वर के ध्यान के अभ्यास रूप योग से युक्त, ***दूसरी ओर न जाने वाले चित्त से निरन्तर चिन्तन करता हुआ मनुष्य परम प्रकाशरूप दिव्य पुरुष को अर्थात् परमेश्वर को ही प्राप्त होता है।***

b एलेक्ट्रॉन कण की मात्रा (Mass) me = 9.11×10^{-31} Kg.
प्रोटॉन कण की मात्रा (Mass) mp = 1.67×10^{-27} Kg.
न्यूट्रॉन कण की मात्रा (Mass) mn = 1.68×10^{-27} Kg.
न्यूट्रीनो कण की मात्रा (Mass) अत्यल्प (Negligible) तथा आवेश (charge) सम (±) है।

c All the other particles known so far belong to a category called 'Resonances'..... they live for a considerably shorter time, decaying after a few 'particle seconds'.....
Most unstable particles live only for an extremely short time compared with the human time scale; less than a millionth of a second. *(Page-251 Tao of Physics, 3rd Edition, Publishers M/s. Flamingo)*

एवम् न्यूट्रॉन कणों की विशेषता है, कि इनमें क्वार्क [a] नामक अति अस्थिर कणों का संयोग भी रहता है परन्तु अनुमान है, कि उपलब्ध उच्चतम शक्ति द्वारा प्रहार किए जाने पर टूटने के पश्चात् भी ये कण तत्काल संयुक्त हो जाते हैं और पुनः अपनी पूर्व स्थिति में आ जाते हैं। ऐसा लगता है, कि न्यूट्रीनो एवम् एन्टी-न्यूट्रीनो कण प्रत्येक पदार्थ के सृजन के साथ ही विद्यमान रहते हैं तथा ये कण गतिशील (चल) कण होने के कारण विनाश की प्रक्रिया को साथ-साथ चलाते रहते हैं।

क्योंकि अव्यक्त चेतनबल (आत्मा) को अपने आप को व्यक्त करने हेतु किसी भौतिक माध्यम की आवश्यकता होती है, अतएव आत्मा पदार्थ जगत को आधार बनाती है और इस प्रकार सृष्टि के क्रियाकलाप को अपनी इच्छा से चलाती है।

प्रकृति में कण (Particles) तो बहुत हैं परन्तु सभी में चार्ज (charge) केवल धन (+), ऋण (–) एवम् सम. (±) तीन प्रकार के ही होते हैं। यही तीन चार्ज प्रकृति के तीन प्रकार की प्रवृत्तियाँ अर्थात् गुण हैं और सृष्टि का निर्माण इन्हीं तीनों गुणों के आधार पर हुआ है। इसीलिए इस सृष्टि को त्रिगुणमयी माया भी कहा गया है [b]। न्यूट्रॉन, प्रोटॉन एवम् एलेक्ट्रॉन कणों में भी तीन ही प्रकार के चार्ज हैं, अतएव मूल प्रवृत्ति के आधार पर तीन गुणों के

---

a In recent years, there has been an increasing amount of evidence, that the Protons and Neutrons too are composite objects, but the forces holding them to-gether are so strong – or what amounts to the same – The velocities acquired by the components are so high, that the relativistic picture has to be applied, where the forces are also particles. Thus the distinction between the Constituent particles and the particles making up the binding forces becomes blurred and the approximation of an object consisting of constituent parts breaks down. Thus the particle world can not be decomposed into elementary components.

(Page-93 Tao of Physics, 3rd Edition, Publishers M/s. Flamingo)

The only way to find out what the constituents of these Particles are, is to break them up by banging them together in collision process involving high energies ..... when they collide with high velocities, there will never be fractions of a Proton among them. The fragments will always be entire hadrons.

(Page-275 Tao of Physics, 3rd Edition, Publishers M/s. Flamingo)

So far, no hadrons have ever been broken up into their constituent quarks, inspite of bombarding them with the highest energies available, which means that quarks would have to be held to-gether by extremely strong binding forces.

(Page-282 Tao of Physics, 3rd Edition, Publishers M/s. Flamingo)

b ***त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत्। मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम्।।*** *(गीता-7/13)*

अर्थ :- गुणों के कार्य रूप सात्विक, राजस और तामस - इन तीनों प्रकार के भावों से यह सारा संसार-प्राणीसमुदाय मोहित हो रहा है। इसीलिए इन तीनों गुणों से परे मुझ अविनाशी को नहीं जानता।

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया। मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।। *(गीता-7/14)*

अर्थ :- क्योंकि यह अलौकिक अर्थात् अति अद्‌भुत त्रिगुणमयी मेरी माया बड़ी दुस्तर है; परन्तु जो पुरुष केवल मुझको ही निरन्तर भजते हैं, वे इस माया को उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् संसार से तर जाते हैं।

तारामण्डलों में व्याप्त अव्यक्त चेतन बलों (Forces) को ब्रह्मा, विष्णु एवम् महेश के प्रतीक के रूप में मान लिया गया है। *अगले सत्र में कुछ विशिष्ट प्रतीकों की विस्तार से चर्चा की गयी है।*

इन्हीं बलों (Forces) पर अपना वर्चस्व स्थापित करने हेतु इनकी मूर्ति पर भावपूर्ण स्तुति द्वारा ध्यान एकाग्र करने का प्रयास किया जाता है तथा ***शत प्रतिशत ध्यान लग जाने से मोक्ष सहित संसार की हर दुर्लभ वस्तु प्राप्त की जा सकती है। 'गायत्री मंत्र[a]' की यही खोज है, जिसका कि वैदिक धर्मावलम्बियों ने लम्बे समय से सफलतापूर्वक प्रयोग किया है ।***

7. भारतीयों की दृष्टि में सृष्टि रचना [b] :- भारतीय मनीषियों ने भी सृष्टि के विस्तार को क्रमिक विकास के रूप में ही माना है, परन्तु भारतीयों का विकास विवरण क्रम कुछ भिन्न प्रकार से है। यह विकास दो स्तरों पर हुआ है - ***(A)*** प्राकृत ***(B)*** वैकृत, जिसे आधुनिक विज्ञान की भाषा में खुलासा करने से निम्न चित्र बनता लगता है।

(A) प्राकृत सृष्टि :-

(i) महत्तत्व (हिरण्यगर्भ) :- कोई भी मृत पड़ी आकाशगंगा प्रलयकाल की अवधि तक कृष्ण शक्ति (Dark Energy) के रूप में अदृश्य बनी रहती है। परन्तु इसी अवधि में अन्य आकाशगंगाओं से निःसृत फोटॉन कणों को पूर्ण रूप से आत्मसात करती रहती है।

तत्पश्चात् सृष्टि निर्माण हेतु ईश्वरीय प्रेरणा से वह आकाशगंगा फोटॉन कणों से प्राप्त ऊर्जा के कारण हाइड्रोजन गैस एवम् धूल के कणों के एक अति विशाल बादल के रूप में बदल जाती है। यह विशाल बादल 'गुरुत्व बल' के कारण सिकुड़ कर एक अण्डे (हिरण्यगर्भ) का रूप ले लेता है।

(ii) अहंकार [c] :- एक निश्चित अवधि में यह अण्डा (हिरण्यगर्भ) भारी विस्फोट (Big Bang) के साथ फट जाता है और तब न्यूट्रॉन तारों से निर्मित एक विशाल स्तम्भ का प्रकटीकरण होता है। न्यूट्रॉन तारामण्डल का लगभग 1/3 भाग प्रोटॉन एवम् एलेक्ट्रॉन तारा मण्डलों के रूप में परिवर्तित हो जाता है। हमारी आकाशगंगा का सम्भावित प्रादुर्भाव लगभग इसी क्रम से हुआ होगा। *इसकी वैज्ञानिक परिकल्पना का वर्णन चित्र संख्या-1.05 सहित **प्रथम सत्र** में किया गया है।*

(iii) भूत सर्ग :- न्यूट्रॉन तारा समूह से विभाजन होकर विष्णु लोक (प्रोटॉन तारा समूह), ब्रह्मलोक (एलेक्ट्रॉन तारा समूह अर्थात् एक खरब सौरमण्डल) एवम् ग्यारह प्रकार के रुद्रों की

---

a *'मानव धर्म का आधार - गायत्री मंत्र'* नामक लेख पुस्तक के भाग-3 में है।

b *श्रीमद् भागवत महापुराण, प्रथम खण्ड,, पन्द्रहवाँ संस्करण, गीता प्रेस, गोरखपुर,, वि0सं0 2047 पृष्ठ-243 से 245 तक*

c अहंकार का अर्थ है - विश्व में विलीन हुई आकाशगंगा अब अपने भिन्न अस्तित्व में प्रकट हो गयी। यही भाव सम्पूर्ण सृष्टि में उत्पन्न प्राणियों का भी रहता है, कि वे अपने को एक भिन्न सत्ता मानते हैं, विराट के अंग नहीं इस प्रकार की भावना का संचार एवम् नियमन इस न्यूट्रॉन तारामण्डल से निर्मित ज्योतिर्स्तम्भ द्वारा होता है, क्योंकि यह विराट का अंग है और विराट (आकाशगंगा) पूरी तरह से पृथ्वी पर उत्पन्न सभी प्राणियों के मन, बुद्धि, चित्त एवम् अहंकार को संचालित करता है।

उत्पत्ति हुई तथा हमारे सूर्य (ब्रह्मा) से अपने पृथ्वी मण्डल के सम्पूर्ण दृश्यमान भौतिक जगत का प्रादुर्भाव हुआ अर्थात् पंच महाभूतों (आकाश, वायु, तेज, जल एवम् पृथ्वी) तथा मेघ, नदियाँ, महासागर, पर्वत आदि प्राकृतिक भूत सर्ग (भौतिक जगत) की उत्पत्ति हुई।

(iv) इन्द्रियों की सृष्टि :- भौतिक जगत की उत्पत्ति के अनन्तर पाँचों ज्ञानेन्द्रियों (कान, त्वक्, आँखें, जिह्वा एवम् नाक) के सूक्ष्म भाव (कदाचित् तन्मात्राएं, जो तरंगों के रूप में थीं) की उत्पत्ति हुई, अर्थात् ज्ञान शक्ति के सूक्ष्म भाव का वातावरण में संचार हुआ। ज्ञान शक्ति क्रिया की प्रेरक होती है, अतएव इस संदर्भ में ज्ञान शक्ति के संचार का अर्थ है जीन का क्रियाशील होना, ताकि प्राणियों की वंश वृद्धि होती रहे।

(v) इन्द्रियों के देवताओं की सृष्टि :- पिण्ड में इन्द्रियों के सूक्ष्म भावों (तन्मात्राओं) की रचना के समानान्तर विराट में भी सभी ब्रह्माओं (एलेक्ट्रॉन तारा समूह) की इन्द्रियों की रचना सप्तर्षि तारामण्डल के रूप में हुई। यह सप्तर्षि [a] तारामण्डल सभी ब्रह्माओं (विराट ब्रह्मा) की इन्द्रियों की वृत्तियों का अधिष्ठाता देवता का कार्य सम्पादन करता प्रतीत होता है, अर्थात् यह तारामण्डल ब्रह्माओं की नाक, कान, नेत्र, जिह्वा, त्वक्, मन एवम् बुद्धियों का नियमन करता है।

इसी के समानान्तर पृथ्वीलोक में मानवों की इन्द्रियों की वृत्तियों का नियमन करने हेतु पृथ्वी, आकाश, अग्नि, जल एवम् वायु देवताओं की उत्पत्ति हुई, जिससे क्रमशः नाक, कान, आँख, जिह्वा एवम् त्वक् (त्वचा) का नियमन हो सका। चूँकि पृथ्वी का गुण है ***'गंध'***, आकाश का गुण है ***'शब्द'***, अग्नि का गुण है ***'प्रकाश'***, जल का गुण है ***'रस'*** तथा वायु का गुण है ***'स्पर्श'***, अतएव ये पाँचों देवता मानवों की पाँचों ज्ञानेन्द्रियों का नियमन करते हैं। मानवों का मन 'चन्द्रमा' द्वारा तथा बुद्धि का नियमन हमारे सूर्य (ब्रह्मा) द्वारा होता है।

(vi) अविद्या :- इस छटवीं प्रकार की सृष्टि में वास्तविक रूप से सर्वप्रथम निकृष्ट योनि की जीवात्माओं ने जन्म धारण किया। उन जीवात्माओं के क्रम में 'मत्स्य अवतार' अर्थात् जीवन पहले-पहल जल से प्रारम्भ हुआ। विज्ञान के अनुसार 'सायनो बैक्टीरिया' (पानी पर उगी काई) से सृष्टि आरम्भ हुई। इस काई से वातावरण में भारी मात्रा में ऑक्सीजन का उत्सृजन हुआ और तब एक कोशिका के प्राणियों (तामिस्र), अन्धतामिस्र (समुद्र की तलहटी), घुप अंधेरे में अति विचित्र प्रकार के प्राणी, जो पानी के भीतर ही रहते हों, अति शीत, अति ताप एवम् अति दाब की स्थितियों में रहने वाले भारी (dense) जीव तथा प्रकाश से बहुत दूर रह सकने वाले प्राणियों का जन्म हुआ। ऐसे प्राणी पत्थरों की तहों में भी हो सकते हैं। वे सभी तम, मोह, महामोह, तामिस्र तथा अन्धतामिस्र श्रेणी के प्राणी कहे गये लगते हैं। यहाँ तक छह प्रकार की प्राकृत सृष्टि बतलायी गयी है। क्योंकि सृष्टि के आरम्भ में प्रकाश लगभग न के बराबर था, अतएव जैसे-जैसे प्रकाश में वृद्धि होती गयी, उसी प्रकार के प्राणियों का विकास होता गया। अतएव सर्वप्रथम उपरोक्त श्रेणियों का सृजन होना अधिक सार्थक लगता है।

---

a सप्तर्षि तारामण्डल सभी ब्रह्माओं अर्थात् विराट ब्रह्मा की इन्द्रियों का नियमन करता है तथा इनका प्रादुर्भाव विराट ब्रह्मा से ही हुआ है, इसका विस्तृत वर्णन ***पञ्चम सत्र*** में दिया गया है।

(B) वैकृत सृष्टि :-

(i) स्थावर (वृक्षादि) :- उपरोक्त छह प्रकार की प्राकृत सृष्टि के पश्चात् सातवीं प्रकार की सृष्टि अर्थात् वनस्पति, औषधि, लता, त्वक्सार, वीरुध और द्रुम की प्रजाति वाले स्थावरों (जो स्थिर रहते हैं चलते नहीं हैं) का पृथ्वी पर विकास हुआ। इनका संचार नीचे (जड़) से ऊपर की ओर होता है। इनमें प्रायः ज्ञान शक्ति प्रकट नहीं रहती। ये भीतर ही भीतर केवल स्पर्श का अनुभव करते हैं तथा इनमें से प्रत्येक में कोई विशेष गुण रहता है।

- **वनस्पति** - जो बिना मौर (फूल) आए फल उत्पन्न करते हैं, जैसे - गूलर, बड़, पीपल आदि।
- **औषधि** - जो फलों के पक जाने पर नष्ट हो जाते हैं, जैसे - धान, गेहूँ, चना आदि।
- **लता** - जो किसी का आश्रय लेकर बढ़ते हैं, जैसे ब्राह्मी, गिलोय आदि।
- **त्वक्सार** - जिनकी छाल बहुत कठोर होती है, जैसे बाँस आदि।
- **वीरुध** - जिनकी लता पृथ्वी पर ही फैलती है, किन्तु ऊपर की ओर नहीं चढ़ती, जैसे - खरबूजा, तरबूज आदि।
- **द्रुम** - जिनमें पहले फूल आकर फिर उन फूलों के स्थान पर ही फल लगते हैं, जैसे - आम, जामुन आदि।

(ii) तिर्यक्‌योनि (पशु-पक्षी) :- यह आठवीं पशुओं वाली सृष्टि अट्ठाईस प्रकार की बतलायी गयी है। इन्हें काल का ज्ञान नहीं होता। तमोगुण की अधिकता के कारण ये केवल खाना-पीना, सोना एवम् मैथुन करना आदि ही जानते हैं। अर्थात् इन प्राणियों में ज्ञान का विकास अधिक नहीं होता। इनमें सूँघने की शक्ति की विशेषता होती है और ये इस प्रकार वस्तुओं की पहचान कर लेते हैं। इनके हृदय में विचार शक्ति या दूरदर्शिता नहीं होती है। इन प्राणियों का क्रमवार विभाजन निम्न प्रकार का बतलाया गया है -

***(a)* एक खुर वाले पशु -** गधा, घोड़ा, खच्चर, गौरमृग, शरभ और चमरी। (कुल छह)

***(b)* दो खुर वाले पशु -** गौ, बकरा, भैसा, कृष्णमृग, सुअर, नील गाय, रुरू मृग, भेड़ और ऊँट। (कुल नौ)

***(c)* पाँच नख वाले पशु -** कुत्ता, गीदड़, भेड़िया, बाघ, बिलाव, खरगोश, साही, सिंह, बन्दर, हाथी, कछुआ, गोह, मगर आदि। (कुल तेरह)

***(d)* पाँच नख वाले पक्षी -** कंक (बगुला), गिद्ध, बटेर, बाज, भास, मल्लूक, मोर, हंस, सारस, चकवा, कौआ और उल्लू आदि।

(iii) मनुष्य :- नवीं सृष्टि मनुष्यों की है। मनुष्य समुदाय रजोगुण प्रधान (क्रियात्मकता से भरपूर), कर्मपरायण और दुःखरूप विषयों में सुख मानने वाला होता है। इस श्रेणी में मन, बुद्धि का श्रेष्ठतम विकास हुआ है। विज्ञान का मानना है, कि सायनो-बैक्टीरिया (पानी पर उगी काई) से विकसित होते-होते जिराफ, ऊँट, बन्दर, चिम्पांजी और अन्त में मनुष्य बना। उनका विश्लेषण है, कि 'जीन' के साथ पर्यावरण की क्रिया-प्रतिक्रिया हुई और लाखों वर्षों में क्रमशः विकास हुआ, तब मानव बना। भारतीयों की सोच है, कि ***पूरी सृष्टि प्रवृत्तिमूलक है, इसीलिए सभी प्राणियों की उत्पत्ति प्रवृत्ति के आधार पर हुई है।*** एक खुर, दो खुर, फिर पाँच खुरों से इन्द्रियों एवम् मन, बुद्धि का विकास भी जुड़ा हुआ है। मनुष्य के दोनों हाथों और

दोनों पैरों में पाँच-पाँच उंगलियाँ हैं, अतएव उसके शरीर में पाँचों तत्वों (पृथ्वी, जल, वायु, तेज एवम् आकाश) का पूरा-पूरा समावेश है तथा उसकी पाँचों इन्द्रियाँ (नाक, कान, आँख, जीभ व त्वचा) पूरी तरह से विकसित है। ***भारतीय वैज्ञानिकों के अनुसार सृष्टि अनादि है, उसका कभी प्रारम्भ हुआ ही नहीं है तथा प्राणियों की उत्पत्ति उनके द्वारा पूर्व जन्म में किए गये कर्मों से निर्मित प्रवृत्ति के आधार पर होती है। इस प्रकार कोटिशः जीवों का जन्म अनुकूल वातावरण, जैसे - ताप, आर्द्रता, दबाव आदि के अनुरूप समयानुसार होता है, क्रमिक विकास द्वारा नहीं।***

(iv) देव सर्ग :- मानव सृष्टि के निर्माण के साथ-साथ महापिण्ड (महाकाश) में सम्पूर्ण प्राणी जगत पर नियन्त्रण रखने हेतु तथा कर्मफल के विधान का शतप्रतिशत अनुपालन कराने के लिए देव शक्तियों का प्रादुर्भाव हुआ लगता है। आधुनिक भाषा में कहें, तो महेश्वर के पश्चात् ब्रह्म लोक एवम् विष्णु लोक का निर्माण तो हुआ, परन्तु इन लोकों के निर्माण के पश्चात् देव कणों तथा आसुरी कणों का निर्माण भी हुआ, ताकि सृष्टि में देवासुर संग्राम की प्रक्रिया भी अनवरत रूप से चलती रहे और इसी आकाशीय प्रक्रिया के अनुवाद स्वरूप पृथ्वी पर विविध क्षेत्रों में विविध प्रकार के संघर्ष भी चलते रहें। देवताओं की सृष्टि के साथ-साथ असुरों की सृष्टि का सृजन एक प्राकृतिक प्रक्रिया है। आज के विज्ञान के अनुसार अभी तक दो सौ से भी अधिक कणों की जानकारी प्राप्त हुई है। इनमें से अधिकांश कण सेकंड के दस लाखवें समय तक ही स्थायी रह पाते हैं। कुल कणों में अठारह कण अपेक्षाकृत अधिक स्थिर पाये गये हैं, उनमें निम्न पाँच कण तथा इनके प्रतिकण पूरी सृष्टि की कालावधि तक रहने वाले हैं।

1. फोटॉन *2.* प्रोटॉन *3.* एलेक्ट्रॉन *4.* न्यूट्रीनो एवम् *5.* न्यूट्रॉन (परमाणु की नाभि के भीतर पूरे काल तक स्थिर) तथा इनके पाँच प्रतिकण।

वे आठ कण जो अपेक्षाकृत अधिक स्थायी हैं, उनका विवरण नीचे दिया जा रहा है -

1. म्योन (Muon) *2.* पीयोन (Pion) *3.* केओन (Kaon) *4.* ईटा (Eta) *5.* लैम्बडा (Lambda) *6.* सिगमा (Sigma) *7.* कास्केड (Cascade) तथा *8.* ओमेगा (Omega)

भारतीयों के अनुसार भी देव सृष्टि आठ प्रकार की है। इन आठ प्रकार के नाम - पितर, असुर, गन्धर्व-अप्सरा, यक्ष-राक्षस, सिद्ध, चारण-विद्याधर, भूत-प्रेत-पिशाच और किन्नर-किम्पुरुष-अश्वमुख हैं।

(v) ब्रह्मा के चौदह मानस पुत्र एवम् कौमार सर्ग :- यह सृष्टि बिल्कुल भिन्न प्रकार की है। इस सृष्टि में ब्रह्मा के मन की चौदह प्रकार की वृत्तियों का प्रतीकात्मक वर्णन है, इसी को ब्रह्मा के मानस पुत्रों का नाम दिया गया है। इन चौदह मानस पुत्रों में सात वृत्तियों को सात ऋषियों (सप्त ऋषि तारामण्डल) का नाम दिया गया है *(जिसकी चर्चा **पञ्चम सत्र** में विस्तार से की गयी है)* तथा अन्य सात स्थूल तथा सूक्ष्म वृत्तियाँ भी बतलायी गयी हैं। इन सभी वृत्तियों में कौमार सर्ग का विशेष स्थान है। इस वृत्ति का नाम है 'निवृत्ति मार्ग'। ब्रह्मा की इच्छा थी, कि सृष्टि की रचना की जाये, तदनुसार उनके अन्तर से सर्वप्रथम अज्ञानमय पाँच वृत्तियों (तम, मोह, महामोह, तामिस्र एवम् अन्धतामिस्र) पर आधारित सृष्टि का सृजन

हुआ तत्पश्चात् अनुलोम विलोम सिद्धान्त के अनुसार *'ज्ञानमय'* अर्थात् निवृत्ति परक सृष्टि का, जिससे चार कुमारों - सनक, सनन्दन, सनातन, सनतकुमार की उत्पत्ति हुई। इस उत्पत्ति की गणना वैकृत एवम् प्राकृत दोनों प्रकार की सृष्टि रचना में की गयी है। इन कुमारों को जब ब्रह्मा ने सृष्टि विस्तार की आज्ञा दी, तो उन्होंने संसार से विरक्त रहने की इच्छा प्रकट की। इस पर ब्रह्मा जी को अत्यन्त क्रोध आ गया तब ब्रह्मा के क्रोध से उनके भौंहों के बीच से रुद्र भगवान की उत्पत्ति हुई, जिन्हें सृष्टि के संहार का कार्य सौंपा गया।

8. कुछ अन्य महान सूक्त :-

(A) ब्रह्म सत्यम् जगन्मिथ्या :- वेद का यह महावाक्य है, कि **'ब्रह्म'** एक मात्र सत्य है, अर्थात् स्थिर है, शेष यह जगत (प्रकृति) की हर वस्तु परिवर्तनशील है, अस्थिर है, अतएव इस कारण हर विवेकशील मानव को, जो स्वयम् 'ब्रह्म' का ***विस्तार*** है, मृत्यु से पूर्व 'ब्रह्म' को जान लेना चाहिए।

यह जान लेने का अर्थ यह नहीं है, कि इस सत्य वाक्य को किसी गुरु से सुनकर अथवा पुस्तक से पढ़ कर जानकारी कर ली तो काम चल जायेगा और वह साधक जन्म-मरण के चक्र से सदैव के लिए छूट जायेगा, बल्कि इसका अर्थ यह है, कि ***वह साधक इस महावाक्य का निरन्तर चिन्तन करता रहे और स्वयम् को 'ब्रह्म' का स्वरूप मानकर उन विचारों की गहरायी में डूबता हुआ 'समाधि' अवस्था अर्थात् विचार शून्यता की स्थिति को प्राप्त करे, तत्पश्चात् जब साधक को सर्वत्र हर वस्तु में परमात्मा के दर्शन होने लग जाएं*** [a] ***और उस काल में साधक की शारीरिक मृत्यु हो जाये, तब उसे मानव जीवन के चरम लक्ष्य (मोक्ष) की प्राप्ति सम्भव है*** [b] ।

(B) चार पुरुषार्थ :- मानव जीवन के चार लक्ष्य हैं। आधुनिक कहे जाने वाले लोगों को सिर्फ अर्थ (धन) कमाना ही मानव जीवन का एक मात्र लक्ष्य समझ आता है, क्योंकि उन्हें लगता है, कि अधिक धन इकट्ठा कर लेने से वे जीवन के सभी सुख पा लेंगे। यह उनकी भारी

---

a ***तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः। गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः।।*** *(गीता-5/17)*
अर्थ :- जिनका मन तद् रूप हो रहा है, जिनकी बुद्धि तद् रूप हो रही है और सच्चिदानन्दघन परमात्मा में ही जिनकी निरन्तर एकीभाव से स्थिति है, ऐसे तत्परायण पुरुष ज्ञान के द्वारा पाप रहित होकर अपुनरावृत्ति को अर्थात् परमगति को प्राप्त होते हैं।
विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि। शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः।। *(गीता-5/18)*
अर्थ :- वे ज्ञानीजन विद्या और विनययुक्त ब्राह्मण में तथा गौ, हाथी, कुत्ते और चाण्डाल में भी समदर्शी ही होते हैं।

b ***यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्। तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः।।*** *(गीता-8/6)*
अर्थ :- हे कुन्तीपुत्र अर्जुन ! यह मनुष्य अन्तकाल में जिस जिस भी भाव को स्मरण करता हुआ शरीर का त्याग करता है, उस उस को ही प्राप्त होता है, क्योंकि वह सदा उसी भाव से भावित रहा है।
तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च। मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम्।। *(गीता-8/7)*
अर्थ :- इसलिए हे अर्जुन ! तू सब समय में निरन्तर मेरा स्मरण कर और युद्ध भी कर। इस प्रकार मुझ में अर्पण किए हुए मन-बुद्धि से युक्त होकर तू निःसन्देह मुझको ही प्राप्त होगा।

भूल है। धन की हाय-हाय से हर आदमी अनेकानेक रोगों के चंगुल में फँसता जा रहा है। ***डायबिटीज़, रक्तचाप, दिल एवम् फेफड़े की बीमारी, नींद न आना, ये सब रोग आमतौर पर सुनाई देते हैं और हर आदमी आज यह मानकर चल रहा है, कि ये तो होने ही हैं।*** गोली खाओ और इन बीमारियों से लड़ते रहो, जब तक जीवन चले। जब शरीर थक जाये, तो मर जाओ। बस इससे आगे कुछ नहीं है। भारतीय जीवन दर्शन के तीन मूल उद्देश्य हैं :- ***(a) सौ वर्ष तक स्वस्थ और सुखी जीवन कैसे जिया जाये (b) सुखद मृत्यु कैसे हो (c) आवागमन का चक्र कैसे समाप्त हो अर्थात् 'मोक्ष' की प्राप्ति कैसे हो ? इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, मानव जीवन के चार लक्ष्य अर्थात् पुरुषार्थ स्थापित किए गये हैं। पैसा धर्मपूर्वक कमाओ। क्योंकि मानव जीवन मुश्किल से प्राप्त हुआ है, अतएव उसे व्यर्थ न जाने दो, अर्थात् सांसारिक भोगों के साथ-साथ योग (परमात्मा से मिलने) के लिए प्रयत्न भी करते रहो। दूसरे शब्दों में 'मोक्ष' की कामना को प्राथमिकता देते रहो, जिससे बार-बार के जन्म-मृत्यु के चक्र से इसी जन्म में छुटकारा हो जाये। इतना बड़ा उद्यम अर्थात् पुरुषार्थ का विचार भारतीय मनीषियों की ही देन है। अब यह बात अलग है, कि हम संयमित जीवन जी कर उसे प्राप्त कर लें अथवा भोग में ही बहुमूल्य मानव जीवन को खो दें।***

(C) ब्रह्मचर्य व्रत :- आज के युग में इस व्रत का बहुत मखौल उड़ाया जाता है और यह माना जाता है, कि इस सम्बन्ध में भारतीय विचार बिल्कुल खोखला है। यह प्रचारित किया जाता है, कि मानव शरीर में रज एवम् वीर्य की उत्पत्ति पूरी तरह से भोजन पर निर्भर करती है और पौष्टिक भोजन खाने भर से इसकी क्षतिपूर्ति स्वतः होती रहती है। अतएव सम्भोग पर सीमा लगाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

सम्भोग के समय भौतिक रूप से जो रज, वीर्य की क्षति होती है, उसकी पूर्ति भोजन से होने की बात तो सही है, परन्तु इस क्रिया के दौरान अदृश्य रूप से चुम्बकीय विद्युत तरंगों का दोनों शरीरों से भारी मात्रा में विसर्जन होता है, वह क्षति अधिक हानिकारक होती है, जिसको नापने का अभी तक कोई यन्त्र नहीं बना है। ऐसा लगता है, कि सम्भोग के समय जो आनन्द का अनुभव होता है, उस समय शरीर से भारी मात्रा में न्यूट्रॉन कणों का विसर्जन होता है, परन्तु ये न्यूट्रॉन कण शीघ्र टूट कर प्रोटॉन, एलेक्ट्रॉन एवम् न्यूट्रीनों कणों में परिवर्तित हो जाते हैं तत्पश्चात् प्रोटॉन एवम् एलेक्ट्रॉन कण आकाश में विकीरित हो जाते हैं, जबकि न्यूट्रीनो कण कोशिकाओं (cells) में रुक जाते हैं तथा विघटन का कार्य करना शुरू कर देते हैं। इस प्रकार **'प्राण'-शक्ति** क्षीण होने लगती है और इसी कारण पूरा स्नायु संस्थान कमज़ोर पड़ते-पड़ते शिथिल होकर एक सीमा के बाद अनेक रोगों को आमंत्रित करता है, क्योंकि तब शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता गिरती चली जाती है और अन्त में एड्स (AIDS) जैसी भयंकर बीमारी तक हो सकती है। अतएव देश-काल, उपलब्ध भोजन, मौसम और अनेक अन्य परिस्थितियों को ध्यान में रखकर भारतीय मनीषियों ने सम्भोग की सीमा तय की थी। यथार्थ सम्भोग (मैथुन) से पूर्व सात अन्य स्थितियाँ भी हैं, जो हमें मैथुन (सम्भोग) तक पहुँचाती हैं। यदि उन क्रमवार सात स्थितियों से बचा जा सके तभी अन्तिम स्थिति (मैथुन) से साधक बच सकता है। वे सात स्थितियाँ हैं :- *(a)* विपरीत लिंगी

के रूप का चिन्तन करना *(b)* उनकी कीर्ति का बखान करना *(c)* उनसे हँसी मजाक करना *(d)* उन्हें काम-भाव से देखना *(e)* उनसे गुप्त बातचीत करना *(f)* उनके साथ सम्भोग का विचार मन में लाना तथा *(g)* उनसे सम्भोग करने का दृढ़ निश्चय कर लेना।

भारतीय मनीषियों की सोच है, कि -

मरणम् बिन्दु पातेन, जीवतम् बिन्दु धारणात्
न जातु कामा कामनामुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्ध्यते।।

अर्थात् वीर्य (बिन्दु) का स्खलित होना मृत्यु तुल्य है तथा वीर्य को धारण किए रहना जीवन है। जिस प्रकार अग्नि में आहुति देने पर वह हविषा जल कर राख बन जाती है तथा अग्नि (चाह) अधिक-अधिक बढ़ती ही जाती है, उसी प्रकार कामसुख को कितनी ही बार क्यों न भोगा जाये, यह कभी भी तृप्ति नहीं देता। वृद्धावस्था में जो व्यक्ति मैथुन करते हैं अथवा मात्र काम चिन्तन करते हैं, उनकी **'प्राणशक्ति'** का आकाश में विसर्जन होता रहता है तथा उन्हें शक्ति के क्षीण होने से लकवा (Paralysis) समेत अन्य कई रोग हो सकते हैं। विशेष बात यह है, कि ब्रह्मचर्य के खण्डित होने से 'ध्यान' का एकाग्र होना कठिन हो जाता है। तब न विद्यार्थी मेधावी बन सकता है और न साधक **'योग'** की सिद्धि ही प्राप्त कर सकता है। इसीलिए इसे पाप कर्म की संज्ञा दी गई है और जहाँ तक संभव हो सके, इससे बचने का प्रयास करने की सलाह दी गई है, ताकि -

(a) विद्यार्थी जीवन में मेधा शक्ति प्रखर रहे और विद्यार्जन करके व्यक्ति एक श्रेष्ठ मानव बन सके। अन्ततोगत्वा पच्चीस वर्ष की उम्र के पश्चात् परिपक्व अवस्था प्राप्त करके मानव को गृहस्थ जीवन में तो प्रवेश करना ही है। वस्तुतः यह सब विधान व्यक्ति के उच्चतर विकास हेतु ही बनाए गये हैं।

(b) बुढ़ापा बिना कष्ट के गुजरे और मृत्यु भी दुःखद न हो, वरना जवानी में किए गये अति इन्द्रियभोग बुढ़ापे और मृत्यु के समय बहुत दुःखदायी साबित होते हैं। तथा

(c) मानव जीवन के चरम लक्ष्य (मोक्ष) जैसी दुर्लभ स्थिति को प्राप्त किया जाना सम्भव हो सके। इन्हीं कारणों से भारतीय मनीषियों ने ब्रह्मचर्य व्रत पर ज़ोर दिया था। आज विदेशों की नकल से प्रभावित हम लोग जीवन को समग्र दृष्टि से देख सकने की क्षमता खो बैठे हैं, अतएव राह से भटक गये हैं।

शास्त्रों में दो श्रेणी के ब्रह्मचर्यवृती का उल्लेख मिलता है :-

1. शिक्षाकाल में गुरुकुल में रहते हुए दण्ड तथा मेखला धारण किए हुए कठोर नियमों पर चलने वाला—**'ब्रह्मचारी'**

2. ऋतुकाल में स्व पत्नी से समागम करने वाले गौणवृती—**'गृहस्थ'**

भाव यह है, कि जीवन में संयम का पालन हो, ताकि मानव हर प्रकार से आर्य (श्रेष्ठ) बने।

(D) सती व्रत की अवधारणा :- इस अवधारणा की भी कटु आलोचना सभी क्षेत्रों से सुनने को मिलती रहती है। भारतीय संस्कृति पूर्णतः प्रकृति के व्यवहार पर आधारित है,

अतएव परमात्मा की पत्नी रूपा प्रकृति, जो हमारी जैसी अनन्त जीवात्माओं को जन्म देती है, पूर्णतः एक पति अर्थात् परमात्मा को अपना सब कुछ मानती है तथा अपने सत्य व्रत को निष्ठापूर्वक निभाती है। ईश्वर द्वारा बनाए गये विधान का प्रकृति कभी भी उल्लंघन नहीं करती। कठोर निष्ठा एवम् आज्ञा पालन के कारण ही पूरी सृष्टि का कार्य संतुलित एवम् सुचारु रूप से चलता है। श्री सीताजी ने हर मुश्किल को झेलते हुए भी पातिव्रत धर्म को पूरी तरह से निभाया था। सृष्टि संचालन में जिस प्रकार प्रकृति धुरी है, वही भूमिका परिवार में स्त्री की होती है। यदि स्त्री भटक गयी, तो परिवार का नष्ट होना निश्चित है। श्रीराम ने भी पूरी निष्ठा से एक पत्नीव्रत का निर्वहन किया था, परन्तु यदि मानव जीवन में कोई पति चरित्र भ्रष्ट हो, तो पत्नी अपने त्याग एवम् बलिदान द्वारा पति को सही रास्ते पर ला सकती है, यही भारतीय सोच है और भारतीयता के उच्च मानदण्ड हैं। यही आदर्श स्थिति है। यही प्रकृति का संदेश है। इसी में जीवन की श्रेष्ठता है। ऐसे दम्पति से उत्पन्न संतान ही समाज की, राष्ट्र की सुसंस्कृत संतान होती है, वरना अनेक पतियों से सम्बन्ध रखने वाली नारी से उत्पन्न संतान, समाज में पशुता को ही बढ़ावा देती हैं। ऐसी संतानों से समाज अपराधी प्रवृत्ति का ही बनता है, जैसा कि विदेशों में हो रहा है। इसी अवधारणा के आधार पर सती अनुसूइया, सती सावित्री और सीता जैसी आदर्श पत्नियों ने भारतीय समाज का सम्मान बढ़ाया था, क्योंकि वे अपने पति को परमेश्वर का स्वरूप मानकर पूजा करती थीं और इस मार्ग पर चलकर ही उन्हें ***'मोक्ष'*** की उपलब्धि भी हुई।

(E) तैंतीस कोटि देवता [a] **:-** पृथ्वी पर तैंतीस कोटि (प्रकार) के देवताओं का वास है, अर्थात् तैंतीस प्रकार की सृजनात्मक, पालक एवम् विध्वंसात्मक शक्तियाँ निरन्तर अपना कार्य करती रहती हैं। इन शक्तियों के नाम निम्न प्रकार से हैं -

(i) वसु = 8 (ii) इन्द्र = 1 (iii) प्रजापति = 1 (iv) आदित्य = 12 (v) रुद्र = 11 *कुल संख्या = <u>33</u>*

(i) वसु :- वसु आठ हैं। वसु वे देवता हैं, जिनसे जीवन का पालन एवम् रक्षण होता है, अतएव इनके कार्य में हमें बाधा न बनकर सहायक बनना चाहिए। इन वसुओं का कार्य सहित विवरण निम्न प्रकार से है -

***(i)a.* पृथ्वी :-** सम्पूर्ण प्राणी जगत का आधार होने के साथ-साथ पृथ्वी भोजन उत्पन्न करके सभी प्राणियों का सतत् भरण-पोषण करती है। पालीमर (पालीथीन) एवम् रासायनिक उर्वरकों द्वारा होने वाले प्रदूषण से पृथ्वी की उर्वरा शक्ति आज क्षीण हो रही है, इसे रोका जाना चाहिए। यज्ञादि द्वारा प्रकृति की पूजा करना कर्त्तव्य है।

***(i)b.* जल (नदियाँ एवम् सागर) :-** जल के बिना तो जीवन का प्रवाह ही बन्द हो जायेगा, इस वसु को कारखानों के रासायनिक कचरे एवम् सीवर से सतत् प्रदूषित किया जा रहा है। रासायनिक कचरे को तथा सीवर को साफ करके ही नदियों में डाला जाना चाहिए।

***(i)c.* वायु :-** प्राणवायु के बिना जीवन का स्पन्दन ही सम्भव नहीं है। फ्रिज, ए.सी., कारों, डीज़ल बसों, कारखानों एवम् वायुयानों से सतत् निसृत हाइड्रोकार्बन गैसें वायुमण्डल

---

a बृहदारण्यकोपनिषद्-3/9/2

को प्रदूषित कर रही हैं। इससे विश्व का तापमान बढ़ रहा है तथा ओजोन परत का छेद बड़ा होता जा रहा है। इस पर विश्व-पर्यावरण विद् चिन्तित तो हैं, परन्तु कुछ ठोस कदम उठाकर इसकी सीमा तय नहीं की जा रही है, जिसकी तत्काल परम आवश्यकता है।

***(i)d.* अग्नि :-** भोजन पकाने व ताप द्वारा हर प्रकार की जीवन उपयोगी वस्तुओं, आयुधों, कारखानों के चलाने, बिजली बनाने आदि में अग्नि का योगदान अन्यतम है, परन्तु इसे अति विषैले तत्वों, जैसे - रबर, पालीमर (पॉलीथीन) एवम् रासायनिक पदार्थों जैसे - पटाखे आदि को जलाकर वातावरण को विषाक्त किया जा रहा है, इन पर अंकुश लगाया जाना चाहिए।

***(i)e.* आकाश (अंतरिक्ष) :-** सम्पूर्ण जगत, आकाश में स्थित है तथा सभी अन्य वसुओं का यह मूल तत्त्व है। इसे अति से ज्यादा ध्वनि से, रॉकेटों के कचरे से, एटमी अस्त्रों द्वारा विकीरित धूल एवम् एटमी अस्त्रों के परीक्षण द्वारा उत्पन्न धुँआ आदि से प्रदूषित किया जा रहा है। इससे पूरी पृथ्वी के प्राणी जगत को गम्भीर खतरा है। इन खतरों पर गम्भीरता पूर्वक विचार करके इनके निराकरण के उपाय किए जाने चाहिए।

***(i)f.* चन्द्रमा एवम् ग्रह :-** चन्द्रमा पृथ्वीवासियों को शीतल प्रकाश तथा औषधियों को रस प्रदान करता है। विशेष बात यह है, कि व्यक्ति के जन्म के समय पर जातक की कुंडली में चन्द्रमा जिस स्थान पर स्थित होता है उससे उस व्यक्ति की प्रवृत्ति (स्वभाव) की जानकारी मिलती है अर्थात् चन्द्रमा हर मानव के मन पर भारी प्रभाव रखता है। ग्रहों का प्रभाव भी मानव जीवन पर निश्चित रूप से पड़ता है। *चन्द्रमा एवम् ग्रहों द्वारा उत्पन्न दुष्प्रभावों को दूर करने के उपायों की चर्चा **पञ्चम सत्र** में की गयी है।* इन ज्योतिर्पिण्डों से लाभ लेने के अन्य उपाय, जैसे - सोमवार का व्रत, चन्द्र पूजन, ग्रह पूजन, दान आदि ज्योतिष शास्त्र के निर्देशानुसार कर्त्तव्य हैं।

***(i)g.* द्युलोक (राशियाँ) :-** ऐसा प्रतीत होता है, कि बारह राशियाँ मानव के चित्त को प्रभावित करती हैं, अतएव ज्योतिष शास्त्र के निर्देशानुसार इनके प्रभावों का लाभ उठाना कर्त्तव्य है।

***(i)h.* नक्षत्र गण :-** मानव के अहंकार को नक्षत्रगण प्रभावित करते हैं, जो हमारी आकाशगंगा के ही अंग हैं। इनसे सम्बन्धित लाभ-हानि की जानकारी व उपाय ज्योतिष शास्त्र में निर्देशित हैं।

(ii) इन्द्र :- मेघों (इन्द्र) से वर्षा होकर धन-धान्य की उत्पत्ति होती है, जिससे सम्पूर्ण प्राणी जगत का पोषण होता है। वृक्षों की अंधाधुंध कटाई से वर्षा चक्र का संतुलन नष्ट हो रहा है। पर्वतों पर बर्फ कम गिरती है, ग्लेशियर का क्षेत्रफल कम होता जा रहा है। नदियों के जल में कमी आने का खतरा है तथा भूजल आदि की कमी से पृथ्वीवासियों को जलापूर्ति कठिन होती जा रही है। वृक्षों की कटाई पर नियन्त्रण किए जाने की विशेष आवश्यकता है।

(iii) प्रजापति :- प्रजापति का एक अर्थ होता है प्रजा को उत्पन्न करने वाला अर्थात् **'ब्रह्मा'**। सारी सृष्टि के निर्माण में एलेक्ट्रॉन कणों में समाहित 'ब्रह्मा' का योगदान महान है। हर पदार्थ की रचना में एलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन एवम् न्यूट्रॉन कणों की पूरी-पूरी भागीदारी है। इनमें एलेक्ट्रॉन की गणना सर्वप्रथम आती है। भले ही ब्रह्मा को श्राप है, कि उनकी पूजा न की जाये, परन्तु उन्हें पूरी सृष्टि से अलग भी तो नहीं किया जा सकता। श्राप द्वारा पूजा की मनाही का अर्थ इतना ही है, कि एलेक्ट्रॉन से निर्मित संसार के भोग पदार्थों से मानव को अपने आप को

बचा कर रखना चाहिए, क्योंकि इन्द्रिय भोगों में लिप्त होने से ही जीवात्मा का पतन होता है, अर्थात् उसे बारम्बार जन्म लेना पड़ता है। अतएव प्रजापति की पूजा की मनाही का कदाचित् यह अर्थ हो सकता है, कि सीमा के भीतर रहकर ही संसार के भोग्य पदार्थों (फ्रिज, ए.सी, टी.वी., ट्यूब लाइट अर्थात् सम्पूर्ण एलेक्ट्रॉनिक गुड्स) का उपयोग किया जाना चाहिए। प्रजापति का दूसरा अर्थ होता है **'यज्ञ'** अर्थात् 'निष्काम सेवा' (समाज सेवा) जो पूरी गीता की शिक्षा का सार है और यह हर मानव का कर्त्तव्य है।

(iv) बारह आदित्य :- पूरे वर्ष में सूर्य, बारह चन्द्र पथ वाली राशियों पर भ्रमण करता है। सूर्य के प्रत्येक राशि पर भ्रमण करते हुए ऋतुओं में परिवर्तन होता है और वह मानव की बुद्धि तथा मानव के विभिन्न अंगों पर प्रभाव डालता है। ऋतु परिवर्तन के कारण वातावरण में अनेक प्रकार के जीवाणुओं (बैक्टीरिया एवम् वायरस) का प्रादुर्भाव होता रहता है तथा मानव के अन्तर ग्रंथियों (Endocrine glands) के स्रावों में असंतुलन भी आ जाता है तथा वात, पित्त एवम् कफ (हारमोन्स) में विषमता पैदा हो जाती है (आयुर्वेदीय परिभाषा के अनुसार जीवन रसों (हारमोन्स) की तीन ही श्रेणियाँ हैं)। प्राचीन काल में भारतीय मनीषियों ने इस प्रकार के अनेक सूक्ष्म अध्ययन आयुर्वेद एवम् ज्योतिष शास्त्र के अन्तर्गत किये थे तथा प्राण रक्षा के उपाय भी सुझाए थे। योगासन (सूर्य नमस्कार), सूर्य को अर्घ्य देना, सूर्य स्तवन, दान, जप, पूजन एवम् ध्यान करना अभीष्ट हैं।

नित्यकर्म विधि में सूर्य स्तवन हेतु प्रयुक्त सूर्य नामावली निम्न प्रकार से है -

आदित्य, दिवाकर, भास्कर, प्रभाकर, सहस्रांशु, त्रिलोचन, हरिदश्व, विभावसु, दिनकर, द्वादशात्मा, त्रयीमूर्ति एवम् सूर्य।

उपरोक्त नामावली का प्रातःकाल स्मरण व ध्यान करने से दुःस्वप्नों का नाश, रोगों का निवारण तथा सभी प्रकार की मनोकामनाओं की पूर्ति होती है, ऐसी मान्यता है।

(v) ग्यारह रुद्र :- सृजन के साथ विघटन क्रिया का सतत चलते रहना प्रकृति का शाश्वत नियम है। मानव शरीर रोगों का आलय (घर) है। इस प्रकार रोगों के माध्यम से मानव शरीर के भीतर विघटन क्रिया निरन्तर चलती रहती है। इन सूक्ष्म अध्ययनों के फलस्वरूप कुछ प्राकृतिक उपाय ज्योतिष शास्त्र में सुझाए गये हैं, जैसे - रुद्र स्तवन, रुद्राभिषेक, प्रदोषव्रत (त्रयोदशी), मुख्य शिवरात्रि सहित बारह मास की बारह शिवरात्रियों को शिव आराधना, दान, मृत्युञ्जय जप, पूजन व ध्यान आदि का नियम है, जिन्हें करने से **'प्राणशक्ति'** का रक्षण होता है और रोगों से बचाव हो सकता है। ये सारे प्राकृतिक उपाय आयुर्वेदिक उपचारों के

भगवान रुद्र (महाकाल)

चित्र : 4.09

साथ-साथ बतलाए गये हैं। इन दोनों शास्त्रों के ज्ञान की पूर्ण समझ ही मानव की कष्टों से रक्षा कर सकती है। गीता में वर्णित 'देवता' शब्द से एक भावार्थ उपरोक्त देवताओं की पूजा से भी प्रतीत होता है, क्योंकि इस प्रकार ही मानव को मानसिक शान्ति की प्राप्ति सम्भव है। ***सम्पूर्णता की समझ का अर्थ तो यह होना चाहिए, कि समाज के आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग का रोटी, कपड़ा, मकान एवम् शिक्षा का निष्काम भाव से प्रबन्ध किया जाये तथा मानव अपने स्वास्थ्य के प्रति भी पूर्ण रूप से सजग रहकर उपरोक्त देव शक्तियों की पूजा-अर्चना, व्रत आदि अनुशासनों का पालन भी करे। इस प्रकार मानव दोनों प्रकार के देवताओं का पूजन करे, इसी में उसका सम्पूर्ण कल्याण निहित है[a] ।***

आधुनिक युग में रोगों से बचाव के अनेक उपाय, जैसे - मॉडर्न मेडीसिन्स, कीटनाशक दवाओं और रसायनों का प्रयोग किया जाता है। ये सभी अप्राकृतिक साधन हैं, जिनकी प्रतिक्रियास्वरूप कीटाणु इन दवाओं के प्रति प्रतिरोधी बन जाते हैं तथा उनकी कठिन से कठिनतर प्रजातियाँ उत्पन्न हो जाती हैं और तब रोगों का शमन न होकर उनका सरल से कठिन (complex) रोगों, जैसे कैन्सर एवम् एड्स आदि में परिवर्तन हो जाता है। आधुनिक विज्ञान ने मानव जीवन को लम्बा अवश्य बनाया है, परन्तु ऐसा नहीं लगता, कि इन आधुनिक दवाओं से मानसिक शान्ति की प्राप्ति हुई हो। जितना अधिक इन्द्रिय भोग की ओर मानव आकर्षित हो रहा है, उतना ही उसका मानसिक सन्तुलन बिगड़ता जाता है। भौतिक रूप से मानव हृष्ट-पुष्ट दिखने लगा है, परन्तु जितनी मानसिक बेचैनी आज पश्चिमी जगत में दिखलायी पड़ रही है, वह अभूतपूर्व है। अधिकांश तथाकथित सभ्य भौतिकवादी जनता नींद की गोली खाकर नकली नींद सोती है। कीटनाशकों का प्रयोग इतना अधिक हो रहा है, कि वह सब कुछ हमारे सभी प्रकार के भोज्य पदार्थों, जैसे - सब्जियों, दालों, गेहूँ आदि में घुसकर उनमें विषाक्तता उत्पन्न कर रहा है। अतः आधुनिक विज्ञान से प्राप्त दैहिक

---

a ***सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः। अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक्।।*** *(गीता-3/10)*
अर्थ :- प्रजापति ब्रह्मा ने कल्प के आदि में यज्ञ सहित प्रजाओं को रचकर उनसे कहा, कि तुम लोग इस यज्ञ (निष्काम कर्म) के द्वारा वृद्धि को प्राप्त होओ और यह यज्ञ तुम लोगों को इच्छित भोग प्रदान करने वाला हो।

देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः। परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ।। *(गीता-3/11)*
अर्थ :- तुम लोग इस यज्ञ (निष्काम सेवा) द्वारा देवताओं (समाज) को उन्नत करो और वे देवता तुम लोगों को उन्नत करें। इस प्रकार निःस्वार्थ भाव से एक दूसरे को उन्नत करते हुए तुम सबको मोक्ष की प्राप्ति होगी।

इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः। तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः।। *(गीता-3/12)*
अर्थ :- यज्ञ के द्वारा उन्नत हुए देवता ***(प्राकृतिक शक्तियाँ - अग्नि, जल, वायु, नदियाँ, पर्वत, वृक्ष, मेघ, पृथ्वी आदि)*** तुम लोगों को बिना माँगे ही इच्छित भोग निश्चय ही देते रहेंगे। इस प्रकार उन ***देवताओं के द्वारा दिए हुए भोगों को जो पुरुष उन्हें दिए बिना स्वयम् भोगता है वह चोर ही है।***

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः। भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात्।। *(गीता-3/13)*
अर्थ :- यज्ञ से (दानादि सात्विक कर्मों के पश्चात्) बचे हुए अन्न (धन, सम्पत्ति, अन्नादि) को खाने वाले श्रेष्ठ पुरुष सब पापों से मुक्त हो जाते हैं और ***जो पापी लोग अपना शरीर पोषण के लिए ही अन्न पकाते (भोग पदार्थों का प्रयोग करते) हैं, वे तो पाप को ही खाते हैं।***

सुख हमें मोक्ष अर्थात् अन्तिम सुख शान्ति से बहुत दूर ले जा रहे हैं।

दूसरी ओर मोक्ष प्रवण समाज रचना में प्राकृतिक जीवन जीने का मार्ग है, जहाँ मानसिक शान्ति है परन्तु जीवन की चकाचौंध नहीं है। मॉडर्न सुख-सुविधाओं का उपभोग जारी रखते हुए क्या हम मानसिक शान्ति भी प्राप्त कर सकते हैं ? ***यह बात तो हम सबको तय करनी है, कि क्या हमारे जीवन में दोनों प्रकार की विचारधाराओं का संतुलन बिठाया जा सकता है ???***

(F) काल निर्णय एवम् प्रलय :- आधुनिक विज्ञान का मानना है, कि हमारे सूर्य का ईंधन (हाइड्रोजन गैस) लगभग आधा समाप्त हो गया है और अब सूर्य लगभग साढ़े चार अरब वर्ष तक अपनी ऊर्जा और बिखेरता रहेगा अर्थात् सूर्य का कुल जीवन काल लगभग नौ अरब वर्ष हुआ। विज्ञान यह भी बतलाता है, कि पृथ्वी के सूर्य से अलग होने के पश्चात् पृथ्वी आग की गोला थी तथा इतनी गर्म थी, कि किसी प्रकार के जीव के रहने योग्य नहीं थी। अतएव पृथ्वी धीरे-धीरे ठंडी होती गयी और उसमें भारी परिवर्तन हुए, जैसे पहाड़ एवम् समुद्र तथा रहने योग्य थलों का निर्माण हुआ, तब कहीं जाकर बादलों का निर्माण होकर हज़ारों वर्षों तक वर्षा होती रही और स्थान-स्थान पर जल इकट्ठा हुआ। समुद्र जल से भर गये। वायुमण्डल में 'मीथेन' गैस थी, उसका संयोग बादलों की विद्युत से हुआ और जीवन की संरचना के आधार **'अमीनो एसिड्स'** का निर्माण हुआ। तब सबसे प्रथम पानी पर एक प्रकार की हरी-हरी घास (काई) की उत्पत्ति हुई। इस काई को विज्ञान की भाषा में **'साइनो बैक्टीरिया'** (Cynobacteria) कहा जाता है। इस हरी-हरी घास ने वायुमण्डल में प्रचुर मात्रा में 'ऑक्सीजन' उत्पन्न की और इसके उपरान्त धीरे-धीरे 'डार्विन' के सिद्धान्त के अनुसार पर्यावरण के निरन्तर क्रिया-प्रतिक्रिया स्वरूप पेड़-पौधे, कीड़े-मकोड़े, पक्षी-पशु और अन्त में बन्दर से होता हुआ चिम्पान्जी और बिल्कुल अन्त में पूर्ण विकसित मानव उत्पन्न हुआ।

उपरोक्त सारी प्रक्रिया में लगभग ढाई अरब वर्ष से भी अधिक समय लगा होगा, क्योंकि भारतीय गणना के हिसाब से पृथ्वी पर मानव समेत सभी प्राणियों का कुल प्रभावी जीवन काल चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष का है और अब तक की गणना के अनुसार जीवन के प्रथम स्पन्दन के पश्चात् लगभग दो अरब वर्ष पूरे होने को हैं। इस प्रकार प्रभावी जीवन काल के अभी दो अरब बत्तीस करोड़ वर्ष बाकी है। इसके पश्चात् पृथ्वी पर सम्पूर्ण पर्यावरण का विनाश पूरा होते-होते पुनः लगभग दो अरब वर्ष से कुछ अधिक समय लग सकता है। इस तथ्य को यदि प्रतीकों की भाषा में कहें, तो सृजन और पालन करने वाली शक्तियाँ 'ब्रह्मा' एवम् 'विष्णु' का कार्यकाल समाप्त होते ही भगवान शंकर तांडव नृत्य करेंगे और तब विध्वंसकारी शक्तियाँ अर्थात् 'न्यूट्रीनों' कणों में व्याप्त ग्यारह रुद्र सृष्टि का विनाश कर देंगे। लगता है, कि न्यूट्रीनों कण ग्यारह प्रकार के होते हैं, उन्हीं न्यूट्रीनो कणों का भौतिकीकरण होकर पृथ्वी पर विनाश का कार्य होता है।

ज्ञात ग्यारह भौतिक नाम निम्न प्रकार से हैं :-

1. चक्रवात *2.* जल आप्लावन (समुद्री बाढ़) *3.* दावाग्नि (जंगल में लगी आग) *4.* भूस्खलन *5.* उल्कापात *6.* हिमपात *7.* क्षीण वृष्टि (वर्षा कम अथवा वर्षा न होना) *8.* भूकम्प *9.* ज्वालामुखी *10.* महामारी *11.* सूर्य (प्रलयकालीन सूर्य)।

प्रलयकालीन सूर्य :- जैसे-जैसे सूर्य का ईंधन (हाइड्रोजन गैस) समाप्ति की ओर बढ़ता जायेगा, वैसे-वैसे उसके भीतर गुरुत्व बल कम होता जायेगा। परिणामस्वरूप सूर्य का आकार बड़ा होता जायेगा और धीरे-धीरे वह फैलकर पृथ्वीवासियों को इतना बड़ा दिखेगा, जैसे कि उसने आधा आकाश घेर लिया हो। सूर्य के इस रूप को आधुनिक विज्ञान के शब्दों में लालदानव (Red Giant) के नाम से कहा गया है। सूर्य के फैलने के साथ-साथ उसका तापमान भी उच्च से उच्चतर अर्थात् करोड़ों डिग्री सेल्सियस तक पहुँच जायेगा। इस तापमान पर पृथ्वी तथा सौरपरिवार के पास वाले ग्रह वाष्पित होकर सूर्य में समा जायेंगे। तत्पश्चात् सूर्य के बाहरी खोल का अवशिष्ट ईंधन (हाइड्रोजन) के समाप्त होते ही गुरुत्व बल के प्रभाव से अन्तर प्रदेश सिकुड़ता जायेगा, फलतः इस भाग का तापमान बहुत ऊँचा हो जायेगा। अति उच्च ताप पर अन्तर प्रदेश में स्थित हीलियम कणों का संचयन (Fusion) आरम्भ हो जायेगा और कार्बन के अणुओं का निर्माण होने लगेगा तथा सूर्य पहले की अपेक्षा अधिक प्रकाशमान हो उठेगा। विज्ञान के शब्दों में सूर्य [a] के इस स्वरूप को श्वेत वामन (White Dwarf) के नाम से जाना जाता है। अन्त में हीलियम कणों की समाप्ति पर सूर्य काली गेंद बनकर महाकाश में एक ओर को लुढ़क जायेगा।

ई० सन् 2002 में जब गुजरात में भूकम्प आया था और भारी विनाश हुआ था, तब कुछ रूसी वैज्ञानिकों ने परीक्षणों के आधार पर बतलाया था, कि भूकम्प वाले स्थान पर वातावरण में **'न्यूट्रीनों'** कण तैरते हुए पाये गये थे। कई बार जब किसी घर के आगे कुत्ता रोता है, तब वह कुत्ता यमराज के दूतों (न्यूट्रीनों) को हवा में अनुभव कर लेता है और देखा गया है, कि बहुत बार उस घर के आसपास किसी न किसी की मृत्यु हो जाती है।

प्रलय के प्रकार :- शास्त्रों में प्रलय के चार प्रकार बतलाए गये हैं - *(a)* नित्य प्रलय *(b)* प्राकृतिक प्रलय *(c)* नैमित्तिक प्रलय *(d)* आत्यान्तिक प्रलय [b]। प्रलय का अर्थ है मूल तत्त्व में लय हो जाना। ***''यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे''*** सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए भारतीय मनीषियों ने उपरोक्त दो प्रकार की प्रलय मानव के भीतर तथा दो प्रकार की प्रलय का वर्णन ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में किया है।

(*a*) मानव के सम्बन्ध में (नित्य प्रलय) :- हमारे शरीर में निरन्तर लाखों कोशिकाएं टूटती रहती हैं। यह मानव शरीर में होने वाली प्रलय है। इसे ***'नित्य प्रलय'*** के नाम से जाना गया है। विज्ञान की भाषा में कहें, तो इसे Katabolism कहते हैं। इसी के समानान्तर आकाश में भी लाखों रोड़े पिण्ड नष्ट होते रहते हैं।

(*b*) ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में (नैमित्तिक प्रलय) :- हमारी पृथ्वी तथा सौरमण्डल की आयु को विराट ब्रह्मा का एक दिन माना गया है। जिस प्रकार से दिन के अन्त में मानव विश्राम करता है, उसी प्रकार से विराट ब्रह्मा अपने एक दिन के पूरे होने पर विश्राम करता है। ब्रह्मा का एक दिन मानव जीवन की प्रभावी कालावधि = 4.32×10^9 सौर वर्ष है। इसे ***'नैमित्तिक***

---

a हमारे सूर्य से बड़े आकार के सूर्यों की मृत्यु पर वे श्वेत वामन (White Dwarf) से आगे सुपरनोवा (Supernova) न्यूट्रॉन तारा, पल्सर तथा कृष्ण विवर (Black hole) की स्थिति तक पहुँचते हैं।

b *श्रीमद् भागवत महापुराण, द्वितीय खण्ड, पन्द्रहवाँ संस्करण, गीता प्रेस, गोरखपुर, वि०सं० 2047 पृष्ठ-920 से 925 तक*

प्रलय' के नाम से जाना जाता है। इस गणना में तथा विज्ञान की गणना में जो अन्तर बना हुआ है, उससे कुछ भ्रम हो रहा है। *इस बात का स्पष्टीकरण ऊपर 'काल निर्णय' अनुच्छेद में दिया गया है।*

(*c*) **ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में (प्राकृतिक प्रलय) :-** पूरी की पूरी आकाशगंगा के अपने सभी सूर्यों (ब्रह्मलोक), बैकुण्ठ लोक तथा शिवलोक सहित मूल प्रकृति में लय हो जाने को ***'प्राकृतिक प्रलय'*** कहा जाता है। यह कालावधि $31,10.40\times10^{9}$ सौर वर्ष है। उस समय सम्पूर्ण आकाशगंगा कृष्ण शक्ति (Dark Energy) में परिवर्तित होकर अदृश्य हो जाती है। इस काल में प्रकाश तत्व बहुत अधिक क्षीण हो जाता है तथा कृष्ण तत्व (कृष्ण बल) एवम् गुरुत्व बल में अत्यधिक बृद्धि हो जाती है।

(*d*) **मानव के सम्बन्ध में (आत्यान्तिक प्रलय) :-** मानव त्रिगुणमयी माया से निर्मित क्षणिक आनन्द रूपी भवसागर में निरन्तर गोते लगाता रहता है तथा अनेकानेक कष्टों को भोगता रहता है। ये कष्ट उसे अज्ञानता के कारण सहने पड़ते हैं। जब जीवात्मा द्वारा निर्मित स्व-अहंकार का पर्दा हट जाता है, तब उसे अपने स्वरूप की प्राप्ति हो जाती है। ***मैं ''आत्म स्वरूप हूँ'', नित्य ''आनन्द स्वरूप हूँ'' ऐसे भाव का अनुभव जब निरन्तर मृत्यु तक बना रहता है, तो फिर जीवात्मा का त्रिगुणमयी माया से निर्मित शरीर समाप्त हो जाता है।*** इसी को 'मोक्ष' भी कहा गया है, *जिसकी चर्चा **द्वितीय सत्र** में विस्तार से की जा चुकी है।* इस संदर्भ में इसे ***'आत्यान्तिक प्रलय'*** के नाम की संज्ञा दी गयी है, अर्थात् इस प्रलय के पश्चात् जीवात्मा सम्पूर्ण रूप से अपने मूल स्वरूप (परमात्मा) में विलीन हो जाती है।

9. वैराग्य :- परमात्मा से मिलने की सबसे पहली सीढ़ी - राग रहित हो जाना है अर्थात् संसार के सभी पदार्थों, रिश्ते-नातों के प्रति समभाव बना लेना है। जब तक मानव मन संसार से मोह बनाए रखता है, तब तक उसका विकास परमात्मा की ओर हो ही नहीं सकता। धन, मकान, जायदाद, गाड़ी, बंगला, पत्नी, पुत्र तथा मान-सम्मान में मानव का मन फँसा रहता है और वह मृत्यु के वक्त इन्हीं की ओर आशा भरी नज़रों से देखता है, कि कोई उसे बचा ले, परन्तु ऐसा कभी भी नहीं होता और वह छटपटा- छटपटा कर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। जिस प्रकार एक छिपकली अपने शिकार (कीड़े) को पहले कुछ देर तक मुँह में दबा कर रखती है, बाद में उसे कुर-कुर करती हुई चबा जाती है, ठीक इसी प्रकार हर प्राणी पैदा होते ही मृत्यु के मुख में दबा रहता है और उसका कार्यकाल पूरा होते ही मृत्यु उसे चबा लेती है। यदि मृत्यु के पूर्व की छटपटाहट की भयावह स्थिति का अनुभव करना हो, तो कैंसर के अस्पताल में जाकर देखना चाहिए। वैसे भी मानव के कष्टों की दयनीय दशा का दर्शन किसी भी रोगी की पीड़ा को देखकर या स्वयम् के अनुभव से किया जा सकता है। शास्त्रों में कहा गया है, कि जन्म तथा मृत्यु के पूर्व जीव को अपार कष्ट होता है। शेष जीवन में भी क्षणिक सुख के पश्चात् दुःखों की बारम्बार आवृत्ति होती रहती है। इस प्रकार जीव संसार सागर में बारम्बार छटपटाता एवम् व्याकुल होता रहता है। इस सत्य को समझ लेना तथा क्षणिक इन्द्रिय सुखों से दूर रहना ही ***'वैराग्य'*** है।

श्रीमद्भगवद् गीता में साधकों को सलाह दी गयी है, कि ***वे दैहिक सुखों के भोगने के***

परिणाम स्वरूप जन्म, मृत्यु, वृद्धावस्था एवम् रोगों से उत्पन्न कष्टों पर निरन्तर चिन्तन करते रहें तथा पुत्र, पत्नी, घर, सम्पत्ति के प्रति मोह एवम् स्वामिभाव के त्याग की भावना बनाए रखें, इससे वैरागी भावना दृढ़ होती है [a]।

संसार की सभी प्रकार की इच्छाएं अहंकार से उत्पन्न होती हैं तथा इन्हें तीन श्रेणियों के अन्तर्गत रखा जा सकता है -

1. कामिनी - स्त्रीगत आनन्द लेने की चाह।
2. कञ्चन - धन कमाने तथा उसको संग्रह करके उसका उपभोग एवम् प्रदर्शन करने की चाह।
3. कीर्ति - परिवार, समाज व देश-विदेश में मान-सम्मान की चाह।

इन सब इच्छाओं से ऊपर उठ कर जो आगे बढ़ता है, वही ईश्वर की ओर प्रगति कर पाता है।

इस संस्कार को ग्रहण करने और इसे दृढ़ बनाने का मार्ग है - अच्छे महापुरुषों का संग करना, सन्तों के प्रवचन सुनना तथा सद्ग्रंथों का निरन्तर अध्ययन, चिन्तन एवम् अनुपालन करते रहना। ऐसा करने से मानव में संसार की क्षणभंगुरता का विवेक जागता है और तब संसार से वैराग्य हो जाने पर ही वह परमात्मा से प्रेम कर सकता है। कहा भी तो है, कि जहाँ काम (इच्छाएं) हैं, वहाँ राम नहीं हो सकता। श्रीमद्भगवद् गीता में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को जोर देकर समझाते हैं, कि इस काम रूपी शत्रु को मार डालना ही श्रेयस्कर है [b]।

हरिः ॐ तत् सत् !

---

a *इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च। जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम्।। (गीता-13/8)*
अर्थ :- ***इस लोक और परलोक के सम्पूर्ण भोगों में आसक्ति का अभाव और अहंकार का भी अभाव, जन्म, मृत्यु और रोग आदि से उत्पन्न दुःख और दोषों पर बारम्बार विचार करना।***
असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु। नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु।। (गीता-13/9)
अर्थ :- ***पुत्र, स्त्री, घर और धन आदि में आसक्ति का अभाव, ममता का न होना तथा प्रिय और अप्रिय की प्राप्ति में सदा ही चित्त का सम रहना।***

b *धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च। यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम्।। (गीता-3/38)*
अर्थ :- जिस प्रकार धुँए से अग्नि और मैल से दर्पण ढका जाता है तथा जिस प्रकार जेर से गर्भ ढका रहता है, ***वैसे ही उस काम के द्वारा यह ज्ञान ढका रहता है।***
आवृतं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा। कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानलेन च।। (गीता-3/39)
अर्थ :- और हे अर्जुन ! इस अग्नि के समान कभी न पूर्ण होने वाले ***ज्ञानियों के नित्य वैरी काम रूप के द्वारा मनुष्य का ज्ञान ढका हुआ है।***
इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते। एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम्।। (गीता-3/40)
अर्थ :- इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि - ये सब इसके वास स्थान कहे जाते हैं। यह काम इन मन, बुद्धि और इन्द्रियों के द्वारा ही ज्ञान को आच्छादित करके जीवात्मा को मोहित करता है।
तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ। पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम्।। (गीता-3/41)
अर्थ :- इसलिए हे अर्जुन ! तू पहले इन्द्रियों को वश में करके इस ***ज्ञान और विज्ञान का नाश करने वाले महान् पापी काम (कामनाओं) को अवश्य ही बलपूर्वक मार डाल।***